मासिक—

मानव मन्दिर

सम्पादक :

डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 10	शनिवार 10 दिसम्बर, 1983	संख्या 8

परम दयाल फ़कीर सत्संग 13-4-81

(शेष,अक्टूबर के 'मानव मन्दिर' के पृष्ठ 34 से आगे)

एक और आदमी ने मुझे दस हज़ार का ड्राफ्ट भेजा, कहा मैं बीमार हूँ मुझे राज़ी कर दो, यह मैं देता हूँ। मैंने कहा भाई ! यह मेरे वश में नहीं है। निष्काम दे तो ले लूँगा वरना नहीं, तुम्हारे नाम, हमारे बैंक में पड़ा है। उसका कोई जवाव नहीं आया। दो महीने के बाद उसकी औरत का पत्र आया कि मेरा पति मर गया। मैंने वह दस हज़ार रुपया उस का, उस को वापिस कर दिया।

यह ठीक है, शिष्य का यह काम है गुरु की सेवा करना। जो देता नहीं उसे मिलता नहीं ! यह न समझना कि मैं दान के विरुद्ध हूँ मगर जो गुरु लेता है वह मारा जाता है इसवास्ते यह परोपकार का काम होता है अर्थात् :—

शिष्य को ऐसा चाहिए गुरु को सब कुछ दे।
गुरु को ऐसा चाहिए कि शिष्य का कछु न ले ॥

जो चेला देता नहीं, सेवा (service) नहीं करता, उसे कुछ नहीं मिलता, यह बताये देता हूँ आपको। और

नाम किसे मिलता है, पता है ?

पहले दाता शिष्य भया जिस तन मन अरपा सीस।
पीछे दाता गुरु भया जिन नाम दिया बख़्शीश ॥

क्या मतलब ? तन, मन, धन देने से मुराद क्या है ? अपने तन को न समझना कि मेरा है ; मैं तन नहीं हूँ, मै भन नहीं हूँ, मैं धन नहीं हूँ। जिसको इस बात का यक़ीन हो गया उसको तो नाम मिल गया ! गुरु ने उसे क्या नाम देना है !! तुम समझ गये मेरी बात को, मैंने क्या कहा ? उसको तो नाम मिल गया !!!

पिछले ज़माने में बड़े-2 राजे-महाराजे ऋषियों के पास ज्ञान हासिल करने के लिए जाते थे, वह क्या कहते थे ? आश्रम में सेवा करो भाई ! एक गाय दे देते, जब सौ, दो सौ हो जायें फिर आना। वह जो उन्होंने निष्काम सेवा की हुई होती है नां, उनको उस अपनी निष्काम सेवा से ख़ुद-ब-ख़ुद ज्ञान हो जाता है क्योंकि उनका मन स्थिर हो जाता है। कोई शख़्स ज्ञान को हासिल नहीं कर सकता जब तक उसका तन, मन और सुरत स्थिर नहीं होती :—

तन थिर, मन थिर, सुरत निरत थिर होय।
कहें कबीर ता पलक को कल्प न पावे सोय ॥

लाख इन्सान बाचक ज्ञानी हो जायेगा, उसको Real (वास्तविक) ज्ञान नहीं मिलेगा जब तक कि वह अपने तन, मन को, सुरत को स्थिर नहीं कर लेता। सोचो मेरी बात को ! यही बात आज सुबह मैंने कही थी कि अपने आप को उस हालत में ले जाओ जिस हालत में कि तुम वीर्य के कीड़े के रूप में थे। जब तक वीर्य के कीड़े के रूप में थे, तुम्हें पता है कुछ ? तुम सब कुछ भूले हुए थे। भूले हुए थे नां ? कर्म इन्द्रियाँ नहीं थीं, ज्ञान इन्द्रियाँ नहीं थीं, उनका कारण रूप था। जिस तरह बट के बीज में सारा बृक्ष था उस तरह से उस वीर्य के कीड़े में सारा इन्सान था।

बाबा सावन सिंह जी कहा करते थे "दस दरवाजे लंघो ते अग्गे सत्तगुरु खलोता ए" दुनिया ने उनकी बात को समझा नहीं। साधन ज़रूर करना चाहिए। दो प्रकार के साधन होते हैं, एक concentration होती है, एक Meditation होती है। Meditation में इन्सान शक्ल बनाता है, विचार करता रहता है, अनुभव आता रहता है (मगर concentration में यह शून्य होती है) जिस तरह नमदे में सूई खोब देते हैं इस तरह से अपनी सुरत को जब गुरु के रूप में देखो,

प्रकाश में देखो, शब्द में देखो ; इस तरह से उसमें दाख़िल हो जाओ कि तुमको सब कुछ भूल जाये। जब यह अवस्था आ जायेगी, फिर ज्ञान ही ज्ञान है। यह मैंने आपको Practical life (क्रियात्मक-जीवन) का तरीक़ा बता दिया।

कई आदमी अभ्यास करते हैं, वह यह देखना चाहते हैं, अन्दर में ब्रह्मा आ जाये, विष्णु आ जाये, शिवजी आ जाये। ऐसे ही पाखण्ड का जाल बनाया हुआ है, कई कहते हैं सत्तलोक में महाराज ! बड़ी-2 गायें होती हैं दूध होता है, यह होता है, वह होता है; अरे ! यह जो कुछ दृश्य हैं यह सब इन्सान के अपने मन का है। बहिश्त (स्वर्ग) का ज़िक्र है : हिन्दुओं में बहिश्त का क्या ज़िक्र है ? वहाँ आग नहीं है। स्विटज़रलैंड के बहिश्त में ज़िक्र है कि वहाँ आग होती है। अरब में, वहाँ लिखा हुआ है, वहाँ हूरों के साथ ग़ुलाम होते हैं और खजूरें होती हैं ; हमारे यहाँ आम होते हैं और जामुन होते हैं। यह है क्या ? जिस क़िस्म का ख्याल इन्सान के दिमाग़ पर है वही फुरता है। हमको पता नहीं, हम इस मन के चक्कर में आकर फँस गये। मेरी ज़िन्दगी देखिये ! 1905

का एक मेरा दृश्य था ; वह थी माया, उसने मुझ से कितना खेल खिलाया ; यह जितना मैंने काम किया है माया ही के वश में किया है नां ! मगर मेरा हृदय शुद्ध था, सच्चाई के साथ में था। मेरा मन ही मेरा रक्षक था, मेरा मन ही मेरा भक्षक था। माया ही आदमी को फंसाती है और माया ही आज़ाद करती है। इस माया ही को ठीक करने के लिए सत्संग है। वह भी किस का ? जो खुद मायातीत हो। अगर मैं इस ग़रज़ से यहाँ बैठा हुआ हूँ कि मेरा मानवता मन्दिर बन जाये, मेरा यह हो जाये, मेरा यह हो जाये तो मेरी संगत से आपको कुछ नहीं मिलेगा ; माया ही मिलेगी।

तो मैं आपको बताता हूँ कि आप लोग अगर खुद सच्चे हैं, प्रकाश व शब्द का साधन करते हैं तो होगा क्या ? जो भी तुम्हारे सम्पर्क में आयेगा, वह तुम्हारी Radiation लेगा। अगर मैं गन्दा हूँ, मेरा मन ठीक नहीं है, मैं लाख, लोगों को उपदेश करता रहूँ, मैं गन्दगी ही फैलाऊँगा। मैंने क्या कहा है आपको ! आप लोग आये हैं नां ! मैं आपको अमली जिन्दगी (Practical life) बताता हूँ। जब कोई तकलीफ़ आये, मुसीबत आये, कुछ न करो, अपने

कमरे में अलहदा चले जाओ, अपने अन्तर में आप बैठ के अपने -आप को सपुर्द करो। तुम देखोगे कि क़ुदरत कोई न कोई वसीला तुम्हारे छुटकारे (Solvation) का निकाल देगी। यह है जो मेरी समझ में आया है।

आप लोग आये हैं, दाता ! आपने काम दिया, मैं अपनी ज़िम्मेवारी को महसूस करता हूँ। मैं अकेला होता हूँ, पूछता हूँ फ़क़ीर चन्द ! तूने मकड़ी का जाला बना लिया, तू इनको क्या दे सकता है ? यह मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ। मैं आपको अपनी ज़िन्दगी का जो तजुर्बा है वह देता हूँ ; एक ! दूसरे, Good wishes (शुभ भावनाएँ) देता हूँ। अगर आपके दिमाग़ के अन्तर कोई अपने विश्वास से मुझको बना कर काम ले लेते हैं तो इससे सिद्ध हुआ नां कि तुम्हारे मन में बड़ी ताक़त है। तो मेरे मन में भी ताक़त है। तो मैं क्या करता हूँ ? दुःखी मेरे पास आते हैं, सच्चे दिल से चाहता हूँ: इसका दुःख दूर हो जाये। जो आदमी उसको मान जाते हैं, उनके दुःख दूर हो जाते हैं और credit H. H. Pandit Faqir Chand को मिलता है ; I do nothing। आग लगे गुरुआई को, दोस्तो ! एक दिन चलना है :—

चलना है दूर मुसाफ़िर !

चले जाना है ; इस दुनिया की इज्ज़त, दुनिया का मान, दुनिया की दौलत, दुनिया की हविस मेरे साथ जायेगी ? जब प्राण निकल जायेंगे, जो कुछ किया हुआ है, जो कुछ मैंने सोचा हुआ है यह मेरे साथ जायेगा। आप समझते हैं मेरी बात को, मैंने क्या कहा ?

तो आप लोग आये हैं आज के सत्संग में, मैं आपको दुनियादारी के लिए गुर बता चला। कुछ नहीं करना, जब मुसीबत, कोई तकलीफ़ आये, सच्चे बनके अपने अन्तर मस्तिष्क में अपने इष्ट का ध्यान करो। जितने सच्चे होके तुम पुकार करोगे क़ुदरत कोई न कोई सामान तुम्हारे छुटकारे (remedy) का बना देगी। यह मैं क्यों कहता हूँ ? मेरा बनता है और लोगों का बहुतेरों का बनता है। वे समझते हैं बाबा करता है ; अरे ! बाबा कौन करने वाला ! तुम्हारा विश्वास, तुम्हारी अपनी श्रद्धा, तुम्हारा अपना ही concentration of mind (मन की एकाग्रता), तुम्हारी मदद करती है। यह साफ़ बात बताकर अब मैं गुरु बनने के पाप से बच गया। यह जितने गुरुओं ने काम

किया है, लोग कहेंगे यह सत्तलोक गये, उन्होंने इतना पर्दा रखा है और हम ग़रीबों को सच्ची बात न बताकर अपने बच्चों के लिए अपनी जायदादें बनाई, तुम यह समझते हो यह सत्तलोक गये होंगे ? अगर कर्म की Philosophy ठीक है, तो यह सत्तलोक कहाँ गये ! कहीं नर्क में होंगे !! They were not true to themselves. चार दिन की ज़िन्दगी के लिए किस लिए पाखण्ड जगाते हैं !

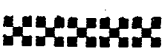

सत्संग परम सन्त परम दयाल

फ़कीर चन्द जी महाराज

मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

तिथि ४-२-८३

सत्तगुर शरण

मंगलम् अशब्द, अरूप, शब्द रूप स्वामी।
मंगलम् अलख, अनाम, अगम नाम, नामी॥
मंगलम् दीन बंधु, दीनानाथ, दाता।
मंगलम् अभेद भेद, आनन्द घन त्राता॥
महिमा अनन्त, आदि, अन्त, कौन गावे।
भेद तेरा कौन जाने, कौन कह सुनावे॥
सन्त भेस प्रगट जगत, जीव को चिताया।
काल कर्म फन्द काट, धुर ले पहुँचाया॥

प्रथम तत्व निज स्वरूप, पद कमल नमामी ।
गाऊँ, ध्याऊँ रात दिवस, भजूं राधास्वामी ।।

——:——

पी नाम सुधारस प्यास बुझे, आशा की
अग्नी मंद पड़े ।
जो आस की फंद पड़ा प्राणी, तू जान
अनाड़ी, अज्ञानी ।।
भव द्वन्द के कीचड़ में सानी, चौरासी की
योनी में सड़े । पी नाम०
बल बुद्धि विवेक में जो पूरा, रनधीर वीर
योद्धा सूरा ।
करे मान मोह मद का चूरा, माया की रन
भूमी में लड़े ।। पी नाम०
जो खाता, पीता, सोता है, आलस में जनम
को खोता है ।
वह अन्त काल में रोता है, नरकों की
कुन्ड में आय गड़े ।। पी नाम०
झूठा सब भोग विलासा है, झूठा सब सैर
तमाशा है ।
नर पानी बीच पतासा है, क्यों भर्म भ्रान्ति

गड्ढे में अड़े ।। पी नाम०

भज राधास्वामी नाम सदा, जल्दी सत्तगुरु
की शरन में आ ।
ले नर जीवन को अपने बना, नहीं काज
तेरा सारा बिगड़े ।। पी नाम०

———

मैं किसी को सत्संग नहीं कराता; मेरी ज़िन्दगी बदल गई या यह है कि मेरा दिमाग़ ख़राब हो गया। अभी यह जो शब्द पढ़ा है, सोचता हूँ वह कौनसा सत्त-गुरु है जिसकी शरण में हम जायें, मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ। दाता दयाल की शरण में गया था, बाणियें पढ़ी थीं, उस असली सत्तगुरु का पता नहीं लगता था।

इस गुरु पदवी ने मुझ को पागल बना दिया है; होश ओ हवाश गुम हो रहे हैं। कल एक शख़्स का पत्र आया, वह लिखता है (वह यहाँ आया था, कुछ दिनों सत्संग कर गया) कि पन्द्रह जनवरी की रात को मेरे रूप ने उस को अन्तर में दर्शन देकर रौशनी के पहाड़ों से गुज़ारते हुए, आगे ले जाकर राधास्वामी

नाम जपाया। अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हुँ, क्यों फ़कीर चन्द ! तू गया था ? तुझे पता है ? नहीं! फिर वह सत्तगुरु कौन हुआ जिस की हम शरण में जायें ? और वह नाम क्या हुआ जिसको हम पूजें, सुमिरन करें ?

छोटी उमर से राम को मिलने निकला था। ऐ मालिक ! तेरा ख़्याल क्यों आया ? दुनिया देखी ! दुनिया में दुःख देखे, सुख देखे, मौतें देखीं, ग़रीबी देखी, अमीरी देखी ! कोई दिमाग़ के अन्दर कुछ तलाश थी; संस्कार भी मिला था हिन्दू घराने से कि भगवान् होता है। ऐ मालिक ! उस सिलसिले में मैं तेरे चरणों में गया था। एक दृश्य था जो आ के दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज़ के चरणों में ले गया। आप ने यह नाम-दान और सत्तगुरु शरण की बाबत मुझे बहुत कुछ लिखा। एक शब्द में मुझे लिखते हैं :—

आ, आ, आ, गुरु के शरण फ़किरवा ।।
तू पपीहा गुरु स्वांति के बादल, गगन गुरु तू
बसे रसातल।
शब्द डोर गह गगन मंडल चल, धार हिये
गुरुचरण फ़किरवा ।।

अब देखो ! जिस वक़्त मैं उन से प्रेम करता था, उन को पूजता था, उन को गुरु मानता था। उस वक्त वह मुझे यह लिखते हैं ! तो मैं तो दाता दयाल की शरण में गया हुआ था ! उन के चरणों में गया था, प्रेम करता था ! गोद में बैठता था ! आरतियें करता था ! कपड़े देता था, श्रद्धा रखता था ! उस वक्त वह मुझे कहते हैं कि फ़कीर चन्द ! तू गुरु की शरण में आ और वह गुरु का पता बताते हैं। तुम लोग, कोई मुझे गुरु मानते हो, कोई बाबा सावन सिंह जी को गुरु मानता है, कोई किसी आदमी को गुरु मानता है परन्तु मुझे उस गुरु के रूप का पता नहीं लगता था कि वह गुरु है कौन, जिसकी शरण में जाना है ?

अब, जब उस आदमी की जो कल चिट्ठी आई, पढ़ी, मैं तो गया नहीं उसके अन्तर, मुझे तो पता नहीं ! वह जो फ़कीरचन्द उस के अन्तर प्रकट हुआ, जो उस को प्रकाश के मण्डल में ले गया और वहाँ नाम जपाया, क्या वह फ़कीरचन्द गुरु था ? जो रूप उसके अन्दर प्रकट हुआ, क्या वह फ़कीरचन्द गुरु था ? जो फ़कीरचन्द उसके अन्दर प्रकट हुआ, अगर वह गुरु था तो मैं नहीं था ! तो फिर साबित हुआ कि फ़कीरचन्द तो गुरु न हुआ। फिर गुरु कौन

हुआ ? उस का अपना ही विश्वास, उस की अपनी ही श्रद्धा, उस का अपना ही ख़्याल, उसकी अपनी ही आस जो थी, वह, उस के विश्वास के अनुसार मेरे रूप में, उस के अन्तर प्रकट हुई ।

मैं यह भाषण क्यों देता हूँ ? मेरे खोटे कर्म ! बदक़िस्मती !! मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा । क्योंकि मैं पन्थ में आया था, इसमें गुरुमत का बड़ा भारा ज़ोर था । आगरे वाले मिलते, वह कहते महर्षि जी गुरु नहीं हैं, गुरु साहिब जी महाराज हैं या सरकार साहिब हैं । ब्यास वाले मिलते, वह कहते, जो कुछ हैं बाबा साबन सिंह जी हैं, और सब ग़लत हैं । तीसरा कहता है मेरा ही गुरु सच्चा है बाक़ी सब झूठे हैं । इस क़िस्म के वहमात और तोहमात (फ़िज़ूल, बेतुकी) की बातें सुना करता था, तो उस वक्त मैंने प्रण किया था कि इस रास्ते सच्चा हो के चलूँगा, जो कुछ मुझको मिलेगा मैं बता जाऊंगा । हो सकता है मैंने जो कुछ समझा हो यह ग़लत हो मगर मेरी नीयत साफ़ है ! अब तुम ही सोचो ! फिर गुरु कौन हुआ ? क्या उस आदमी का अपना विश्वास और श्रद्धा और प्रेम नहीं है ? क्योंकि मैं तो उस के अन्तर गया नहीं! मुझे तो पता

नहीं !!

ऐसे ही, थोड़े दिन हुए अमेरिका से मुझे एक पत्र आया। एन० रावत कोई औरत है, वह लिखती है, बाबा जी ! आप को मैं अक्सर अपने कमरे में सोफ़े पर बैठे हुए और बातें करते हुए देखती हूँ" और मैं अब यह सोचता हूँ, क्या तू अमेरिका जाया करता है ? मैं नहीं गया। फिर सोचने के लिए मजबूर हूँ, कि कौन फ़कीरचन्द उस के अन्तर प्रकट होता है ? खुली आँखों से देखती है, स्वप्न में भी नहीं ! आँख बन्द कर के भी नहीं, सोफ़े पर बैठी हुई देखती है। बात मैं समझ गया मगर जो समझा उस पर, जहाँ पहुँचा वहाँ मुझसे अब ठहरा नहीं जाता, मुझे दुःख यह है, इस वक्त, इस उमर में ! जो कुछ मैंने समझा, जिस नतीजे पर पहुँचा, जहाँ मैंने ठहरना है, जो असली सत्तगुरु का घर है या असली अपनी ज़ात है वहाँ मुझ से ठहरा नहीं जाता। बड़ी कोशिश करता हूं, गिरता रहता हूँ। मगर बात मेरी समझ में आ गई।

वह कौन फ़क़ीरचन्द जाता था ? जब मैं अमेरिका गया था वह ग़रीब औरत है, विधवा है, सर्विस करती है। उस ने कोई मेरी किताब पढ़ी या

किसी और ने बोला, उस के अन्दर मेरा रूप प्रकट होने लग गया। तो जब मैं वर्जीनिया में गया तो उस ने चिट्ठी लिखी कि मैं ग़रीब हूँ, आप को मिलने आ नहीं सकती, अगर आप कृपा करें तो मुझ को मिलें। न्यूयार्क से सौ मील परे वह एक गाँव में थी। मैं, एक अपना हिन्दुस्तानी था उसके पास ठहरा हुआ था, वहाँ से सौ मील मैं कार पर आया और उस के मकान पर गया। चूँकि उस के दिल में प्रेम था, श्रद्धा थी, विश्वास था और मेरे दिल में भी उस के लिए हमदर्दी और प्यार था, वह मेरा प्रेम, मेरा हित उस के दिमाग़ पर उस के प्रेम और विश्वास के कारण असर कर गया और वह जो उस के दिमाग़ पर नक़्शा बैठा, वह उस के सामने फ़कीर चन्द बन के प्रकट हुआ। तो यह सारा खेल क्या है ? जिस क़िस्म का संस्कार, ख़्याल, अच्छा या बुरा इन्सान के दिमाग़ पर पड़ जाता है और वह दिमाग़ उसको क़बूल कर लेता है वही चीज़ उस के सामने फुरती है, जाग्रत में भी और स्वप्न में भी (क्योंकि वह विश्वास और प्रेम करता है) लेकिन यह गुरु नहीं है।

दाता ने मेरे नाम यह शब्द सन् 1921 के लिखे

हुए हैं लेकिन यह समझ मुझे नहीं आती थी। तो यह समझ देने के लिए मुझे यह गुरुआई मिली थी। मैं न गुरु हूँ न महात्मा हूँ, मैं आप लोगों की तरह एक मामूली इन्सान हूँ। हाँ! गुरुमत को मैं जानता हूँ, गुरु किसे कहते हैं? गुरु के हासिल करने का तरीक़ा क्या है? या भ्रम निवारण कर सकता हूँ, रहस्य बता सकता हूँ अगर इस ख्याल से कोई मुझे गुरु मानता है तो वह मुबारिक है। तो दाता फ़रमाते हैं :—

आ, आ, आ, गुरु के शरण फ़किरवा ॥
तू पपीहा गुरु स्वांति के बादल, गगन गुरु तू बसे रसातल।
शब्द डोर गह गगन मंडल चल, धार हिये गुरु-चरण फ़क़िरवा ॥

तो फिर गुरु कौन हुआ? गुरु है शब्द, अन्तर में। बाहर का गुरु है ज्ञान, समझ, विवेक। यह कहाँ से मिलेगा? किसी बाहरले कामिल इन्सान के सत्संग से क्योंकि यह ज्ञान नहीं मिलता इसवास्ते सन्तों ने सत्संग की महिमा बताई है। मगर साथ ही यह भी बताया है कि जो सत्संग कराने वाला है यह महरम-ए-राज़ हो; ख़ुद मतलबी ना हो।

तुमको ऐसी सच्ची बातें कोई महात्मा बताता है, बताओ मुझे ? इस वक्त तक जितने यह गद्दियों वाले हैं या मज़हबी गुरु हैं, जब ऐसी-ऐसी बातें कोई पत्र लिखता है या कहता है तो उस के आगे लाऊड स्पीकर रख देते हैं ; देखो भई ! यह क्या कहता है ताकि दूसरे आदमी भी इसी भ्रम में आकर उन के पीछे लग जायें और हर महीने आते रहें, पैसे चढ़ाते रहें और मन्दिर फ़कीर चन्द का बनवाते रहें। यह है रहस्य ! पता नहीं मेरा शरीर कब तक है, चूंकि मैंने प्रण किया था इसलिए कहता हूँ । तो दाता कहते हैं :—

कथनी बदनी तज मेरे भाई, करनी कर कुछ होय भलाई ।
तब रहनी से लौ रहे लाई, यह सत्तगुरु का बचन फ़क़िरवा ।।

मैंने जितनी बातें की हैं, किताबों में लिखा है, यह कथनी ही तो है ! अब लिखने को जी नहीं चाहता, कहने को जी नहीं चाहता। अब तबियत यह चाहती है कि सुरत अन्दर में चली जाये। कोशिश करता हूँ मगर गिर जाता हूँ ! मेरे कर्म

ठीक नहीं ; मैंने छोटी उमर में, छोटी उमर की शादी से विषय ज्यादा कमाया हुआ है, शायद यह कारण हो जो मैं वहाँ नहीं ठहर सकता, और तो मैंने ज़िन्दगी में कोई ऐब किया नहीं। सिवाय इस काम के अंग के, छोटी उमर की शादी के कारण मैंने अपने घर में काम जो भोगा, शायद यह कारण है कि मैं वहाँ नहीं ठहर सकता, गिरता रहता हूँ। और एक तरीक़े से यह भी है कि कर्म का भोग है भोगना पड़ता है ! मरने के पीछे मेरा क्या हाल होगा, मुझे पता नहीं, मैं नहीं जानता।

दोस्तो ! तुम लोग आ जाते हो, मुझ से प्रेम करते हो, मुझे महात्मा समझते हो, गुरु मानते हो, सन्त समझते हो। मैं अपनी आत्मा पर एक बड़ी ज़िम्मेवारी को महसूस करता हूँ इसलिए मैं साफ़ बयानी से काम लेता हूँ ताकि तुम लोग धोखे में न रहो ; तुम लोगों को धोखा न रहे। यह जितनी निचली मंज़िलें हैं यह सब तुम्हारा विश्वास है, श्रद्धा है। जैसी-जैसी जिस की भावना है उस के मुताबिक़ उस की अपनी भावना का फल मिलता है। मेरे सम्बन्ध में इतनी बातें लोग कहते हैं, अगर मैं इकट्ठा करता तो एक बड़ी भारी किताब बन जाती। मगर

जब मैं अकेला बैठता हूँ तो अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि यह जो कुछ लोग तुम्हारे सम्बन्ध में कहते हैं, तू करता है कुछ ? मैं कुछ नहीं करता। कौन करता है ? मेरा दिमाग़ फ़ेल हो गया, बुद्धि चकित हो गई, कुछ समझ में नहीं आया, सिवाय इस बात के कि ऐ मालिक ! तेरी लीला को तू ही जानता है ! न मुझे भेद मिल सका, न मुझे कुछ ख़बर लगी ! :—

उठ्ठत बैठत सोया जागा, मन रहे इष्ट ध्यान में लागा।
उपजे दृढ़ चित में अनुरागा, कर निसदिन यह जतन फ़कीरवा ॥
सहस कँवल चढ़ त्रिकुटी आजा, सुन्न महासुन्न तारी लगाजा।
भँवर गुफा में मुरली बजाजा, रहे बीन की लगन फ़कीरवा ॥
तू सत्तगुरु का आज्ञाकारी, तू सारी है नहिं संसारी।
राधास्वामी चरण शरण बलिहारी, सेवक का यही चलन फ़कीरवा ॥

मैंने बचपन से मालिक को मिलने की इच्छा की थी सुरत कुछ चाहती है (औरों का मुझे पता नहीं, मैं अब तक भी चाहता हूँ ; सुरत चाहती है), वह जो चाह है उसका नाम है लगन। वह चाह कहां ख़त्म होगी ? अन्तर में। कब खत्म होगी ? जब यह दर्जे गुज़रेंगे, यह मंज़िलें गुज़रेंगी ! मंज़िलें क्या हैं ? पहले तो मेरी समझ में नहीं आता था, अब पता लग गया। सहस्रदल कमल, अनेकवाद है। मन के अन्तर अनेक प्रकार के ख़्यालात जो उठते रहते हैं उनका नाम है सहस्रदल कमल। लगन हो जाती है तो फिर आदमी एक ख़्याल के पीछे लग जाता हैं ; कोई राम के पीछे लग गया, कोई गुरु के पीछे लग गया, कोई किसी औरत के पीछे लग गया ; उसको और कुछ मजनूँ की तरह समझ ही नहीं आती, जहाँ देखता है वहाँ लैला ही लैला उसको समझ आती है। यह अवस्था, तीन, त्रिकुटी कहलाती है। जब वह लगन ख़त्म हो के रूप सामने आ जाता है उसको द्वैत कहते हैं। जब मन ठहर जाता है उसको अद्वैत कहते हैं। सन्तों का मार्ग अद्वैत से परे है। द्वैत, अद्वैत, त्रिकुटी, अनेकवाद यह सब मन के खेल हैं, ख़्यालात के खेल हैं; मानसिक अवस्थाएँ हैं। आगे

है सत्तपद की अवस्था, बह है केवल प्रकाश और शब्द। कोशिश करता रहता हूँ वहाँ जाने की मगर सच पूछते हो, मुझे उस का अन्त नहीं मिला! मैं सोचता था राम को मिलूंगा, मालिक को मिलूँगा, उसका अन्त पाऊंगा, कुछ अन्त नहीं पाया, कुछ भेद नहीं मिला! यही दाता दयाल ने पहले शब्द में कहा है :—

मंगलम् अशब्द अरूप, शब्द रूप स्वामी।

मैं क्यों कहता हूँ यह ठीक है ? मालिक को मिलने निकला था, जब से तुम लोगों से मुझे मन के रूप का पता लगा तो मैं अब कोशिश यह करता हूँ कि मन के रूपों को छोड़ जाऊँ। आगे है प्रकाश और शब्द। अब उसमें रहता हुआ, मैं अब उस मालिक को ढूँढ़ता रहता हूँ। किस मालिक को ? जो मेरे अन्तर शब्द में रहता हुआ शब्द को सुनता है, प्रकाश को देखता हुआ प्रकाश में रहता है उस को ढूँढ़ता हूँ, उस का अन्त नहीं मिलता, क्योंकि वह तो शब्द है नहीं! शब्द सुनने वाला खुद शब्द नहीं है। मैं बोल रहा हूँ तुम मेरी बात को सुन रहे हो, मैं और हूँ शब्द और है। ऐसे ही मैं यह समझता हूँ कि जो कुछ दाता ने इसकी तारीफ़ की है वह

ठीक है। वह अशब्द है, अनाम है, अकह है, अगाध है, अपार है और वही शब्द रूप भी है; जब वह शब्द को सुनता है वह शब्द रूप हो जाता है :—

मंगलम् अलख अनाम, अगम नाम नामी ॥

क्योंकि उसका पता नहीं लगता, वह अलख है, देखा नहीं जाता ! अनाम है, उस की शक्ल कोई नहीं। अगम है, अनुभव है, उस को कुछ कहा नहीं जाता !

मंगलम् दीन बंधु, दीनानाथ दाता।
मंगलम् अभेद भेद, आनन्द घन त्राता ॥

हम शरणागत होते हैं। तो शरण होते-२ कहाँ पहुँचोगे ? यहीं जायेंगे नां ! इसवास्ते वह दीन-दयाल है; जो दीन होके उस के पास जाता है उस की वहाँ तक रसाई होती है। मगर उसका अन्त नहीं मिला, शायद दाता दयाल को मिला हो, स्वामी जी महाराज को मिला हो, मुझे समझ नहीं आई; मैं तो उसका अन्त नहीं पा सकता :—

महिमा अनन्त आदि, अन्त कौन गावे।
भेद तेरा कौन जाने, कौन कह सुनाये ॥

अब वह जो जज़बा था ना मेरा, मैं अपना

अनुभव कह जाऊंगा, वह ठुस होता जाता है। अब कुछ कहने को, सुनने को जी नहीं चाहता। मगर वह प्रणाली एक पड़ी हुई है नां, आदत पड़ी हुई है, लोग आ जाते हैं, कुछ न कुछ कहना पड़ता है। क्या कहूँ, उस के मुत्तलिक़ उस का भेद नहीं समझ आता; बेअन्त माया है उसकी, न कुछ समझ आती है, बस यह समझ में आती है, शरणागतम्! वह मालिक है, जितना हो सकता है, मैं करता रहता हूँ :—

सन्त भेस प्रगट जगत, जीव को चिताया।
काल कर्म फन्द काट, धुर ले पहुंचाया॥

दाता कहते हैं कि वह अनाम था, वह सन्त रूप में आया, क्या किया उसने? उसने जीवों को चिताया। क्या चिताया? मुझे पता नहीं। मैं क्या चिताना चाहता हूँ? मैं अपना अनुभव क्या बयान करना चाहता हूँ? ऐ इन्सान! उस मालिक के नाम पर तूने अपने अज्ञान से इन्सानी नसल को बांट दिया है। यह तेरी भूल है। वह मालिक तो बेअन्त है, न किसी ने उसको जाना न कोई जान सकता है। अगर कुछ जाना तो यही जाना कि वह अनाम है, अकाल है, अगाध है और अपार है।

यह चिताया ! और तू जो भ्रम में फिरता है, तुम को जो मिला है तेरे अपने कर्म का फल मिलता है या भगवान् की इच्छा ! मैं तो अब इस नतीजे पर आया कि अपना कर्म भी अपने हाथ में नहीं है। मैं तो इस उमर में, इस नतीजे पर आया हूँ कि हम जो कुछ करते हैं यह भी हमारे वश में नहीं है, हम से यह कर्म कराये जाते हैं! क़ुदरत का खेल है। तो यह है दुनिया में जीने का राज़। मगर यह बात ऊंची है, आम दुनिया वालों को अपने कर्म को ठीक रखना चाहिए :—

प्रथम तत्व निज स्वरूप, पद कमल नमामी।
गाऊँ ध्याऊँ रात दिवस, भजूँ राधास्वामी॥

प्रथम तत्त्व अब क्या निकला ? प्रथम तत्त्व, निज रूप कौन है ? अपना ही आप है, अपनी ही सुरत है निज स्वरूप। कोई निज स्वरूप बाहर नहीं ! उसी के अन्तर से ही उसके अन्तर प्रकाश निकला, उसी के अन्तर से ही बाबा फ़कीर प्रकट हुआ, उसके अन्तर से ही सब कुछ होता है। तो निज स्वरूप कौन हुआ ? ऐ इन्सान! तेरा अपना ही आपा निज स्वरूप है, कोई दूसरा बाहर का निज स्वरूप नहीं है। मगर हमको चूँकि भ्रम है, अज्ञान है, दुनिया

की आशायें हैं, संसार में फंसे हुए हैं इसलिए हम फंस जाते हैं। असली चीज़ तुम्हारी अपनी ही ज़ात है, अपना ही आप है, उसके सिवाय दूसरा कोई नहीं। चूंकि उसका पता नहीं, इसवास्ते बाहर का सत्तगुरु उसको चेतावनी देता है; चिताता है कि भई! तू, illusion है, भ्रम में है, अपने ही संकल्प को ठीक कर ले। हम अपने संकल्प से ही दुःखी हैं, संकल्प से ही सुखी हैं, अपने ही ख्याल से अच्छे बनते हैं, अपने ही ख्याल से बुरे बनते हैं, यह मेरी समझ में आया है :—

गाऊँ ध्याऊँ रात दिवस, भजूँ राधास्वामी ॥

दाता दयाल का एक शब्द है," राधास्वामी निज स्वरूप, गोता मार तन के कूप, हो जा सुखराशि" राधास्वामी कोई हौवा नहीं है यह तुम्हारा अपना ही रूप है। तुम ख़ुद सब के सब राधास्वामी हो। राधास्वामी के मायने सिर्फ़ शब्दयोग के हैं; राधा-स्वामी ज़बानी लफ़्ज़ कोई नहीं!:—

राधा आद सुरत का नाम, स्वामी आद
शब्द पहचान।

यह शब्द और सुरत हरेक आदमी के अन्दर है।

एक शख़्स राधास्वामी न कहे, परन्तु सुरत से शब्द को सुनता है वह भी राधास्वामी है । यह हरेक मज़हब के टैक्निकल टरम्ज़ होते हैं । तो जो भी सुरत शब्द योग का अभ्यासी है उसको हम राधास्वामी कह देते हैं ; सच्ची बात यह है । सुरत शब्द का मेला, वह तुम्हारे अपने अन्तर में है, हम उस राधास्वामी को बाहर समझते फिरते हैं ! तो हर वक़्त अपने आप में मग्न रहना, हर वक़्त अपने स्वरूप में क़ायम रहना, हर वक़्त अपने स्वरूप का ज्ञान रखना, अगर ऐसा नहीं कर सकते तो हर वक़्त गुरु के स्वरूप का ज्ञान रखना, गुरु के रूप का ध्यान रखना, मालिक का हर वक़्त प्रेम रखना इस अवस्था का नाम है हर वक़्त राधास्वामी गाना और ध्याना । यह जिस शख़्स का पत्र आया है, मैंने इसको कुछ नहीं दिया ; सत्संग में दो चार दिन रहा, मैंने अपना प्रेम दिया, बस !

दाता दयाल ने कहा था फ़कीर ! चोला छोड़ने से पहले तालोम बदल जाना । मैं सन्त सत्तगुरु वक़्त की हैसीयत से अनामी धाम से इस शरीर में आया हूँ इस सच्चाई को प्रकट करने के लिए ताकि जो जीव अधिकारी हैं, जो सचमुच अपने घर जाना

चाहते हैं, असलीयत और सच्चाई के हक़दार हैं उनको इस सच्चाई के दरियाफ़्त करने के लिए कोई मुसीबत न उठानो पड़े। इन गुरुओं के पास जाके धक्के न खाने पड़ें, मुसीबतें न सहनी पड़ें ।

मैं हैरान होता हूँ कि गुरु नानक साहिब की बाणी में जहाँ भी देखो, "पूरा गुरु" "पूरा गुरु" का ज़िकर है। दुनिया ने यह समझा हुआ है जिसके दस हज़ार चेले हैं वह पूरा गुरु है। यह झूठ है । पूरे गुरु के मायने हैं, पूरा ज्ञान। दुनिया यह समझती है कि गुरु नानक पूरे गुरु थे । कोई समझता है बाबा फ़कीर पूरा गुरु है, कोई समझता है स्वामी जी पूरे गुरु हैं । कोई समझता है ब्यास वाला पूरा गुरु है, कोई कहता है निरंकारी पूरा गुरु है। दीवानो ! पूरा गुरु के मायने हैं पूरे ज्ञान के। मैं अपनी duty को पूरा करने के लिए दुनिया को सच्चाई बयान किये जा रहा हूँ ; मैं कहता हूँ मेरे पास कुछ नहीं ! ऐ इन्सान, जो कुछ है तेरे अपने पास है !! सब जगह भटका है ; काल रूपी मन ने भरमाया व भटकाया हुआ है, भटक रहे हैं हम सब लोग, कोई कहीं, कोई कहीं, कोई कहीं, । न कुछ मूर्त्ति में है, वह तुम्हारे मन में है । न कुछ फ़कीरचन्द के पास है,

जो कुछ है वह तुम्हारे मन में है ; न ब्यास व आगरे में कुछ है, तुम्हारे मन में है। जितना खेल है सब तुम्हारे अपने आप का ही है। यही गुरु नानक साहिब कहते हैं :—

कहे नानक बिन आपा चीन्हे, मिटे न भ्रम की काई।
अपने आप को पहचानो, अपने आप को जानो।
तुममें सब कुछ भरा है, तुम खुद पुर्ण हो।

मैं तुम लोगों को फ़कीर चन्द के जाल में नहीं फंसाना चाहता, ऐसा करना ग़लत है। गुरु का मोह इतना ही है कि गुरु के सत्संग में बैठकर उस की बात को सुनकर, समझ कर, उस पर अमल करना यह है गुरु का मोह। और असली गुरु का मोह तुम्हारे अन्तर में है। वह गुरु जो है जिससे तुमने मोह करना है वह शब्द रूप तुम्हारे अपने अन्तर है, तुम्हारा अपना आप है, तुम अपनी क़दर आप करना सीखो। तुम्हारा अपना ही आत्मा तुम्हारा गुरु है, किस भ्रम में पड़ के फिरते हो ! मैं नहीं चाहता दुनिया को धोखा देना कि फ़कीरचन्द को पूजो। मैं गुरु वरु कोई नहीं ! सच्ची बात यह है !! गुरु नाम तो ज्ञान (सार भेद, सार ज्ञान, सार तत्त्व) का है, सच्ची समझ का है, वह मैं आपको बताता हूँ। मैं आप

लोगों की आँखों में मिट्टियाँ नहीं डालना चाहता, न आप को अपने जाल में फंसाना चाहता हूँ ! सच्चाई बयान करता हूँ, बिलकुल । गुरु एक है संसार में, उस का नाम है ज्ञान, अनुभव या परम तत्त्व, परम ज़ात जो तुम्हारे अपने पास है ! इन्सान सहारा चाहता है, सहारा लो । मैं नहीं कहता तुम मेरा सहारा लो , जिस रूप में तुम्हारा विश्वास है, ब्यास जाओ, आगरे जाओ, हिन्दू बनो, मुसलमान मुझको इससे कोई झगड़ा नहीं ; मैं तो मज़हबों के चक्कर से निकल गया, सच्ची बात है ।

बाहर का गुरु, अगर वह गुरु है तो जिज्ञासु को उसके अपने अन्तर असल और सच्चे व पूरे गुरु के रूप और गुरु के चरणों का पता देता है । उसकी duty है कि सच्चाई बताकर के जीव के बाहर के धक्के छुड़ा कर उसको उसी के अपने अन्दर में धकेले, उस को अपने अर्न्तमुखी कर दे और जीव को अपने अन्तर ही सब कुछ यक़ीन करा दे ताकि वह मन्दिरों और मस्जिदों में न भटका खाय, इतनी ही बात है और बाहर के गुरु की कोई duty नहीं । सत्संग में जो बात गुरु कहता है वह तो जिनके समझ में नहीं आती या वो गुरु की बात की रूह की तह को

समझने की कोशिश नहीं करते और गुरु की देह को ही जफ्फा मारते हैं ऐसे आदमियों को कहा जाता है यह गुरु पशु हैं। ऐसे ही अज्ञानी लोग, अज्ञानी गुरुओं के पीछे पड़ के पागल होके अपनी ज़िन्दगी का सत्यानाश करके गंवा गये। पहले मैं भी गुरु पशु था ! कितनी उमर मैंने गुरु-पशुपने में गुज़ारी ; अन्तर में गुरु के रूप को नहीं समझा, गुरु-पशुपना बहुतेरा किया। यह काम जो मुझको दिया था, मैं न गुरु हूँ; न महात्मा हूँ, केवल इसलिए दिया था कि मुझे पता लग जाये कि गुरुमत क्या है और यह वाणी जो कुछ लिखी हुई है, इसमें कहाँ तक सच्चाई है।

गुरु को हर वक्त अपने पास समझो। मत समझो ब्यास रहता है, आगरे रहता है या होशियारपुर रहता है, वह तुम्हारे दिल में रहता है, तुम्हारे दिल में बसता है। जहाँ यह यक़ीन तुमको आया तुम्हारा बेड़ा पार है। मगर आजकल, महाराज ! झूठे गुरुइज़म का ज़ोर हैं और सच्चो बात कहो तो कोई सच्चाई सुनने को तैयार नहीं ! मैं कितनो सच्चाई और सफ़ाई से बात करता हूँ, कितने आदमो हैं जो मेरी बात को सुनते हैं और मेरे भाव को

समझते हैं !!

अब रहा नाम-दान—अपनी नीयत को साफ़ करना ही नाम-दान है। गुरु यह बताता है कि बेबक़ूफ़ फ़कीरचन्द ! तू है कौन ? तू अपने रूप को जान, तेरी अपनी हस्ती क्या है। यह अनुभव नाम-दान है। तो जो नाम जपते हो किसी ग़रज़ और उद्देश्य (Aim & Object) को रक्खो, क्यों नाम जपते हो ? किस वास्ते नाम जपते हो ? क्या ग़रज़ है तुम्हारी ? बग़ैर मक़सद, बग़ैर किसी ग़रज़ के जो काम करता है वह आदमी दिवाना है। जो ऊत-पटांग नाम जपते हैं उनका नुक़सान हो जाता है। नाम जपने से पहले अपने मन को सम्भालो ; साफ़ करो। अगर यह नहीं, तो तुमको नाम खा जायेगा ! कितने ही पागल हुए फिरते हैं, न घर के न घाट के !! अपने ख्याल को ठीक रखो। ऐ इन्सान ! तुम को जो कुछ मिलेगा यह तेरे अपने ही कर्म, ख्याल और नीयत का नतीजा है ; तेरे अपने ही मन के साधन का ही अन्जाम है।

यह जितना संसार है सब इस मन के चक्कर में आया हुआ है, ऋषि, मुनि, पीर, पैग़म्बर, वली, रसूल, नबी। कोई बिरला ही जीव इस चक्कर से

बचा है। इस रास्ते मैं सभी आये :—

चलो चलो सब कोई कहै, बिरला पहुँचे कोय।
एक कनक एक कामिनी, दुर्गम घाटी दोय ॥

कबीर साहिब कहते हैं इस रास्ते सब चले, सब कहते हैं चलो हम अपने घर चलते हैं। रास्ते में दो रुकावटें हैं। एक पैसा (कनक कहते हैं सोने को) और एक औरत यह दो सख्त मुक़ाबला है। आगे कहते हैं :—

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह,
मान बडाई इर्ष्या, तजनी दुर्लभ ऐह।

कहते हैं एक आदमी बेशक पैसे का भी लालच न करे, औरत से भी परहेज़ करे परन्तु मान, बड़ाई और इर्ष्या से नहीं बच सकता।

आज शब्द था :—

पी नाम सुधारस प्यास बुझे, आशा की अग्नी
मंद पड़े ॥

नाम सुधारस पीना क्या है ? नाम से शान्ति मिल जाती है, भ्रम चले जाते हैं, शंकायें चली जाती हैं, जीवन शान्तमय हो जाता है इसका नाम है सुधारस पीना। यह किताबों की वाणियों ने, लफ्ज़ों ने दुनिया

को पागल कर दिया ! जिसको कोई गुरु पूरा नहीं मिला वह सब अधेरे में टकरें खा रहें हैं । मन के समुद्र में शान्ती, असलीयत, हक़ीक़त का आजाना और तबीयत में तस्कीन का आ जाना यही सुधारस पीना है ।

देखो ! एक और शब्द में दाता दयाल कितना स्पष्ट लिखते हैं :—

माई सुख से जनम बिताओ ॥
सो सुख हैं गुरु चरन प्रेम में, नित गुरु के गुन गाओ ॥
सुख नहीं जग प्रपंच में माई, सुख नहीं भोग विलासा ।
सुख है गुरु के प्रीति रीति में, नित आनन्द हुलासा ॥
सुख नहीं मान बड़ाई दिखाये, सुख नहीं धन परिवारा ।
सुख है अन्तखृती जमाये, गुरु का ले के सहारा ॥
सुख नहीं बाहर पखत वन में, सुख नहीं सैर तमाशा ।
सुख है तेरे अन्तर माई, अन्तर कर जिज्ञासा ॥
नित उठ गुरु की भजन बंदगी, नित गुरु संगत करना ।
घट में भजन हो घट में संगत, घट गुरु नाम सुमिरना ॥
तेरे घट में गुरु बिराजे, गुरु सत चित आनन्दा ।
सो गुरु रूप है तेरा माई, ढूंढ त्याग सब धन्दा ॥
घट में पैठ, बैठ कर पुजा, घट मन्दिर उजियारा ।
घट में पिंड ब्रह्माण्ड पसारा, घट में सुख विस्तारा ॥
राधास्वामी सत्तगुरु दाता, घट में तेरे बिराजे ।
घट दर्शन, घट सेवा संगत, घट सुन आनन्द बाजे ॥

यह दाता का शब्द है, कहीं है कपट ! कहीं है छल !! कहीं है धोखा तुम लोगों को !!!

सच पूछते हो ! मैंने देखा कि यह जितना इस-वक़्त का गुरुमत और मज़हब है यह सब का सब धोखा और फ़रेब है। आजकल का गुरुमत कुछ नहीं, केवल ठगमत है, पाखण्डइज्म है। यह महात्मा और मज़हब वाले कोई सच्चाई नहीं बताते, बिलकुल ! यह जीव के कल्याण के लिए काम नहीं करते बल्कि अपने डेरे और अपनी इज़्ज़त, अपने मान और अपनो दौलत के लिए करते हैं ; अपने पीछे ग़लत तरीक़े से लगाते हैं, सच्ची बात नहीं बताते। कबीर साहिब कहते हैं ।—

सत्तगुरु चीन्हो रे भाई !
सत्तनाम बिन सब नर बूढ़े, नरक पड़ी चतुराई ।।
बेद, पुरान, भागवत, गीता, इन को सबै दृढ़ावै ।
जा को जनम सुफल रे प्रानी, सो पूरा गुरु पावै ।
बहुत गुरु संसार कहावैं, मंत्र देत हैं काना ।
उपजें बिनसैं या भौसागर, मरम न काहू जाना ।
सतगुरु एक जगत में गुरु है, सो भव से कड़िहारा ।
कहै कबीर जगत के गुरुवा, मरि मरि लें औतारा ।

तुम लोग आ जाते हो, मेरा जीवन चार दिन

का है ; मैं हूँ ही सत्तपुरुष ! आया ही इसवास्ते हूँ संसार में कि सच्चाई बता जाऊँ : कुछ न करो, बिलकुल ! मैं अभ्यास के भी विरुद्ध हूँ। सबसे पहले सच्चे बनो ; अपने मन को सच्चा बनाओ, बस! जब अकेले बैठो, अपने आप को सच्चे बनाकर अपने ऐबों को देखकर के अपने आप को उसके शरणागत करो बस ! ज्यों-ज्यों तुम सच्चे बनोगे तुम्हारे यह जो मैल है मन की यह हट जायेगी ! अकेले बैठ के प्रार्थना किया करो। जहाँ तुम सच्चे बने, क़ुदरत तुम्हारे लिए दरवाज़ा खोल देगी ; मेरे खोल देती है, मुझे नहीं पता, मैं अपनी जानता हूँ। जब तक तुम्हारा मन पवित्र नहीं है, मन के अन्तर ज़बरदस्त तड़प, प्रेम व चाह नहीं है तुम मर जाओ कानों में उंगलियाँ डाल के, न तुम्हारे प्रकाश आयेगा, न तुम्हारे मूर्ति बनेगी, न तुम्हारे रूप बनेगा ।

जो आदमी इस रास्ते पर सच्चा हो के चलता हैं, ज्यों-ज्यों उसका मन साफ़ हो जायेगा, जब वह अन्दर ठहरेगा, मन function (क्रिया) करना बन्द हो जायेगा, अपने आप ही प्रकाश और शब्द खुल जायेगा। जब तुम सच्चे हो कर के अपने अन्तर चलोगे, जब प्रेम कर के शरणागत होगे तो मन खत्म

हो जायेगा ; जब मन खत्म होगा, अपने आप ही प्रकाश आजायेगा, शब्द आजायेगा, इस में मेहनत की कौनसी बात है ! मैं भी मर गया मेहनत करते-करते मगर आप को मैं आसान तरीक़ा बता देता हूँ ।

यह तो था परमार्थ । अब आप जो दुनियादार हैं, दुनियां चाहते हैं, आन्नद चाहते हैं, खुशी चाहते हैं, उनके लिए कहे देता हूँ; अपना एक ईष्ट बना लो, कोई, जहाँ तुम्हारी मरज़ी हो । अपने आप को उसके सुपर्द करते रहो । जिनना तुम अपने अन्तर प्रेम करोगे उतना ही तुम को फ़ायदा हो जायगा । बस ! कहीं फ़क़ीर चन्द के पास जाने की या किसी गुरु के पास जाने की, धक्के खाने की कोई ज़रूरत नहीं । कहीं भी धक्के खाने की ज़रूरत नहीं है ! बाहर के गुरु की ड्यूटी यही है कि सच्चाई बताकर तुम्हारे मन को काल और माया के चक्कर से निकाल दे । सच्चाई मैंने बता दी, ताकि ग़लती में पड़ कर, तुम ग़ल्त तरीक़े से इन गुरुओं के पीछे न फिरो और न लुटो ।

सब को राधास्वामी !

सत्संग परम सन्त हज़ूर मानव दयाल जी महाराज

मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

तिथि २०-७-८२

गुरु के मत में आके, गुरु गम पन्थ को पहचान ले।
गुरु की संगत करके, गुरु का मर्म ले गुरु ज्ञान ले॥
गुरु है ब्रह्मा गुरु है विष्णु, गुरु है शिव की मूरती।
ब्रह्मा है परब्रह्म गुरु है, गुरु से गुर को जान ले॥
गुरु मिले सब कुछ मिला, अब किसकी मन में चाह हो।
अर्थ धर्म और मोक्ष की, और कामना की खान ले॥
ज्ञान भक्ति दोनों गुरु के, आसरे हैं यह समझ।
गुरु दया से दोनों पाले, जीते जी निरवान ले॥
राधास्वामी सन्त सत्तगुरु, रूप में परगट हुये।
ले शरन अब पद कमल में, झुक के मेरी मान ले॥

ओम् !

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चिज् जगतत्यॉं जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ॥

राधास्वामी ।

मेरे अपने ही आत्मा के स्वरूप सत्संगी भाइयो, बहनो ! आज जो शब्द पढ़ा गया वह दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज का है। हर शब्द के अन्त या कविता के आखिर में दाता दयाल राधास्वामी शब्द जोड़ते हैं। राधास्वामी का मतलब कोई मनुष्य या व्यक्ति नहीं है, न कोई सम्प्रदाय या फ़िरक़ा ही है। राधास्वामी का मतलब परमतत्त्व है। गुरु का मतलब भी वही परमतत्त्व है। मैंने आपको कई बार बताया कि गुरु का मतलब क्या है: गुरु अर्थात् बड़ा। जो सबसे बड़ी वस्तु है जिससे बड़ी कोई और वस्तु हो ही नहीं सकती वह असली गुरु है। और जो सबसे बड़ी वस्तु है, सबसे छोटी भी वही है। इसलिए उपनिषदों में लिखा है :—

महतो महीयान् अणो रणीयान् ।
बड़ी से बड़ी और छोटी में से छोटी ।

अणु क्या होता है ? परमाणु ; परमाणु से भी छोटी से छोटी चीज़ अणु है। और वह क्या हो सकती है जो छोटी से छोटी भी है और बड़ी से बड़ी हो ? वह तो वही हो सकती है जो अपने आप में अनन्त है, जिसका कोई पारावार पा नहीं सकता लेकिन जिसका अंश सारे जगत् के अन्दर मौजूद है ; जगत् ठहर ही नहीं सकता बिना उस अंश के ।

वेदान्ती जो कहते हैं दुनिया माया है, माया है,

कुछ नहीं है, यह सब भ्रम है। कैसे? वह मिसाल देते हैं कि जैसे सन्ध्या के वक्त में, बरसात के मौसम में आप चल रहे हैं, एक रस्सी पड़ी हुई है देहली पर, आप समझते हैं कि सर्प है और जब आप समझते हैं कि सर्प है तो उस वक्त डर भी जाते हैं। सचमुच डर जाते है, छलांग लगाते हैं। लेकिन थोड़ी देर बाद पता लगता है ओहो! यह तो रस्सी थी, मैं डर गया। भय खत्म हो गया। तो वेदान्ती कहते हैं कि यह दुनिया जो है यह असल नहीं है यह सर्प दिखाई देता है। अच्छा! अब अगर यह सर्प दिखाई देता है, असल नहीं है, "असल नहीं" है का मतलब यह नहीं कि उसका अनुभव नहीं है। जब आप ने रस्सी को साँप समझा था, तो क्या आप डरे नहीं? जब तक कि रस्सी साँप दिखाई दे रही थी, तब तक वह साँप की तरह आपको लगी! जब असलियत का पता चला, उसके पीछे फिर कहा कि अरे! यह तो रस्सी है! तब भय चला गया। तो क्या वह जो साँप का भ्रम है, साँप था तो नहीं! लेकिन साँप दिखाई दिया न!! रस्सी थी, रस्सी न होती तो साँप का भ्रम कैसे होता? यह दुनिया है! ठीक है, कहीं दुःख भी हैं सुख भी हैं और यह दुनिया जो आप कहते हो भ्रम है, यह भ्रम कैसे है? इसके पीछे तो असलियत है। साँप के पीछे रस्सी ठीक है कि नहीं! रस्सी न होती तो साँप का क्या सवाल? इसलिए इस दुनिया को बिलकुल यह समझ लेना कि यह है ही नहीं, ग़लत बात हैं। सन्तमत कहता है कि दुनिया भी वास्तविक है। वैदिक मत भी यह नहीं कहता, असल में वेदान्त भी यह नहीं कहता। एक वेदान्त है, भक्तिमार्ग का, उसे कहते हैं Pure विशुद्ध, अद्वैत। यह भक्तिमार्ग है।

यह बल्लभाचार्या जी ने प्रकट किया है। इसके मुताबिक़ दुनिया, संसार जो है, यह भी सत्य है। अगर सत्य नहीं हो तो हम फिर घर बैठ जायें! शंकराचार्य जी सड़क पर जा रहे थे, जाते वक़्त उनके पीछे एक हाथी आया। वह हाथी के आगे-२ हाथी पीछे-२! वह भागे, भाग के वृक्ष पर चढ़ गये। जब बाद में उतरे, उनसे पूछा गया कि आप तो कहते थे यह भ्रम है, यह तो भ्रम था तो फिर आप भागे क्यों? तो उन्होंने कहा कि हाथी भ्रम था, मेरा वृक्ष पर चढ़ना भी भ्रम था! तो शंकराचार्य ने यह नहीं कहा कि दुनिया बिलकुल मिथ्या है, यह बात लोगों ने बाद में बनाई है, मैंने इस पर खोज की है। उन्होंने यही कहा है कि जब इस दुनिया का मुक़ाबला उस परमतत्त्व से किया जाता है, उस मुक़ाबले में यह नीचे रह जाती है। कैसे भ्रम है? अब देखो! हम स्वप्न देखते हैं न! क्या स्वप्न बिलकुल झूठा होता है या बिलकुल सच्चा होता है? जब हम स्वप्न देख रहे होते हैं, स्वप्न देखते वक्त जो स्वप्न में पानी पीते हैं वह हमारी प्यास को बुझाता है, जो भोजन खाते हैं तब तृप्ति होती है। स्वप्न के समय आपको यह शक नहीं होता कि यह झूठा है: अपने आप में स्वप्न की वास्तविकता है लेकिन जब उस स्वप्न की हालत से हम जागते हैं, ऊँची हालत में, जाग्रत में आकर कहते हैं कि अरे वह तो स्वप्न था इस चेतना के मुक़ाबले में। जब हम जागते हैं तभी कहते हैं न! तब बड़ा आनन्द भी आता है। स्वप्न में आप साईकल से गिर गये, टांग टूटी हो, रो रहे हो, आँख खुली, आहा! अरे यह तो स्वप्न था! निर्भय हो गये। लेकिन कब हुये? जब आप ऊँची हालत में पहुँच गये। लेकिन जब जाग्रत अवस्था का स्वप्न की हालत

से मुक़ाबला किया तब स्वप्न नीचे रह गया। इसी तरह से जाग्रत की अवस्था के अन्दर आप मेरे से अलग हैं ; शरीर, मन और बुद्धि यह तीनों हरेक के अलग-२ हैं। शरीर से आप मेरे से अलग हैं। हमारे सूबेदार साहिब बैठे हैं, हमारे से अधिक मज़बूत हैं, हमारी रक्षा करते हैं। अगर आप कहोगे इनका व हमारा शरीर एक है यह ग़लत बात होगी। हम मन से भी अलग हैं। मुझे कोई चीज़ अच्छी लगती है आपको कोई और चीज़ अच्छी लगती है। इसमें अलग होना चाहिए। बुद्धि व समझ की दृष्टि से हरेक का अलग-२ दृष्टि-कोण होता है। तो यह तो अलग-२ चीजें हैं। हम अलग-२ ज़रूर हैं, लेकिन इनके पीछे जो मिलाने वाली चीज़ है वह परमतत्त्व आत्मा है, वह प्रकाश है। वह सबके अन्दर समान है, उस दृष्टि से हम एक हैं। लेकिन जहाँ तक शरीर, मन और बुद्धि का सम्बन्ध है, यह हमारा अलग-२ है। तो जो एक तत्त्व है, जो चीज़ एक बनाने वाली है वह दिखाई नहीं देती, वह आत्मतत्त्व है। वह चीज़ जो हमारे अन्दर एक है उसको तो हमने अनुभव करना है अनुभूति हमारी एक ही होनी चाहिए लेकिन जो हमारा शरीर, मन और बुद्धि तक का व्यवहार है, वह हरेक का अलग-२ होता है। क्या हम अपनी बहिन से, अपनी बेटी से, अपनी मां से एक जैसा व्यवहार करें? नहीं! व्यवहार अलग होगा लेकिन यह मानना होगा कि सभी के अन्दर परमतत्त्व है। जो प्रेम किया जाता है वह परमतत्त्व से किया जाता है। एक बनाने वाली चीज़ परमतत्त्व है।

इसी तरह से गीता में एक जगह लिखा है, कि हमारे अन्दर चार गुण हैं। मनुष्य क्या है? मनुष्य के चार अंग हैं! शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा। सभी मनुष्यों के अन्दर यह

चारों चीजें हैं लेकिन चूँकि हरेक आदमी के अन्दर अलग-२ गुण होते हैं : कुछ चीज़ ज़्यादा कुछ कम होती हैं। इसलिए कुछ लोग ऐसे हैं जिनका शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा तो है लेकिन उनके शरीर की शक्ति, मन, बुद्धि और आत्मा से ज्यादा है। तत्वविज्ञान भी यही कहता है। मान लो एक पहलवान है जैसे गामा पहलवान था, आप कहोगे चूँकि गामा बहुत बड़ा पहलवान है, उसे दर्शन का प्रोफ़ैसर बना दो। बनाओगे ? नहीं ! जिसके अन्दर शरीर की शक्ति ज्यादा काम करती है, जो शरीरधर्मा ज्यादा है, शरीर का ज्यादा पालन-पोषण किया है, मन, बुद्धि और आत्मा की तरफ़ ज्यादा उसका बहाव नहीं है, उस को हमने शूद्र संज्ञा दी है। शूद्र क्या है ? समाजरूपी पुरुष का शरीर शूद्र है ; श्रम जीवी labour class, जो हैं वह सभी शूद्र कहलाते हैं। और किसी मनुष्य में यह होता है कि उसका मन ज्यादा तेज़ काम करता है। मन जिसका तेज़ काम करता है, वह कलाकार होता है, कृषिकार होता है, वह इन्जीनियर बन सकता है। इसलिए हमारे ऋषियों ने उस वक़्त वर्णव्यवस्था जो बनाई वह मनुष्य के स्वभाव पर बनाई। गीता में लिखा है :—

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागश :।

हरेक आदमी का गुण क्या है ; किसी के अन्दर गुण शरीर का ज्यादा है और जो कर्म करता है वह शरीर के लिए करता है, शरीर की ज़्यादा ताक़त के ज़रिये शरीर का काम करता है, वह धन ज्यादा पैदा कर सकता है। यह वर्णविभाग इसके आधार पर था ; यह नहीं था कि ब्राह्मण का बेटा ब्राह्मण और क्षत्रिय का बेटा क्षत्रिय हो। तो इसी तरह से — मनोधर्मा वैश्यः। जो मान-

सिक काम अधिक कर सकता है उसको वैश्य का स्थान दिया गया । इसी तरह से जिसकी बुद्धि ज्यादा काम करती है और बुद्धि भी परमतत्त्व नहीं है । बुद्धि क्या ? बुद्धि समझ-बूझ है जिससे वह चीजों को समझ सकता है। जिसकी बुद्धि ज्यादा होती है वह अच्छा राज्य करने वाला हो सकता है ; सूबेदार जी शरीरधर्मा नहीं, यह बुद्धिधर्मा हैं । बुद्धिधर्मा जो है वह अच्छा राजनीतिज्ञ हो सकता है और अच्छा कमांडर हो सकता है इसलिए क्षत्रिय नाम दिया गया "बुद्धिधर्मा क्षत्रियः"

लेकिन कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जिनकी शरीर मन, बुद्धि तो होती है लेकिन उनका ज्यादा झुकाव होता है दूसरों की भलाई करना । वह दूसरों के लिए जान देने वाले होते हैं, जिनको आप सन्त कहते हैं ; जो दूसरों की भलाई के लिए काम करते हैं । जैसे ब्राह्मण हैं, चिकित्सिक हैं, बैद्य हैं, और जो गुरु गम ज्ञान देने वाले हैं ज्ञान दाता हैं वे सब ब्राह्मण हैं ; जो प्रोफेसर हैं, चिकित्सा करते हैं वह सब ब्राह्मण हैं—आत्मधर्मा ब्राह्मणः । यह बड़ी वैज्ञानिक बात है । आपने कह दिया कि यह तो वेदों में नहीं, वेदों में तो इससे भी ज्यादा अच्छी बात बताई गई हैं । बिलकुल निकृष्ट बता दिया कि हमारी जो संस्कृति है यह कुछ नहीं है, यह जातिवाद है, यह वाद है। यह जातिव्यवस्था तो वर्णव्यवस्था है। वर्ण क्या है ? वर्ण शरीर का मतलव का रंग नहीं है । आज के विज्ञान ने यह बता दिया है कि आप के, शरीर के

ऊपर कई क़िस्म के रंग होते हैं, जिसको आभा-मण्डल कहा जाता है। उसकी फ़ोटो ली जाती है। जब आप क्रोध कर रहे हों तो आपका वर्ण, लाल रंग का आपका आभामण्डल होगा। अगर आप नफ़रत कर रहे हैं तो काले रंग का हो जायेगा। अगर आप प्रेम का अनुभव कर रहे हैं तो वह विशेष गुलाबी रंग का होगा। अगर आप परमात्मा, परमतत्त्व की बात कर रहे हैं तो आपका आभामण्डल सफेद हो जायेगा। क्या मतलब ? जिसकी भावनायें दूसरों को दुःख देने वाली हैं, शरीर है, वह काले वर्ण वाला होगा इसलिए वह शूद्र है। वर्ण उसका नहीं, वर्ण उसके भाव का !! इसलिए इसको वर्णव्यवस्था कहा है। लोगों ने कह दिया कि वर्णव्यवस्था काले, गोरे रंग से है। यह नहीं ! यह तो समझने की बात है चूँकि मनुष्य के मुख्यतः चार ही अंग हैं; शरीर मन, बुद्धि, आत्मा। इसलिए यह चार वर्ण बनाये गये हैं। और आप इन वर्णों को समाप्त कर ही नहीं सकते क्योंकि हर क़ौम के अन्दर अलग-अलग क़िस्म की रुचि वाले लोग होंगे। हमारे यहाँ, जो राज्य है न ! इसको कहते हैं धर्मनिरपेक्ष राज्य; कि धर्म से ऊपर हो लेकिन धर्म-निरपेक्ष का यहाँ मतलब यह है कि जो कुछ हिन्दू धर्म में लिखा हुआ है वह ग़लत है बाकी सब ठीक है। हिन्दू धर्म, हमारा सनातन धर्म है। इसके अन्दर वैज्ञानिक बातें हैं। पंडित मोतीलाल जी शास्त्री मेरे विद्या-गुरु थे। वह राष्ट्रपतिभवन में Lecture देने के लिए गए। उन्होंने राष्ट्रपति को कहा कि आप कहते हो यह हमारी जो वर्णव्यवस्था है यह ग़लत है,

इसको हटा दिया है । आप यह बताओ कि आपने दिल्ली के अन्दर चार नगर बसाये हैं ; सेवा नगर, विनय नगर, शान नगर, और मान नगर । सेवा नगर में चपडासी रहते हैं, विनय नगर में क्लर्क रहते हैं वह हैरान ! अब आप इस व्यवस्था को हटा कैसे सकते हैं। चार किस्म के वृक्ष होते हैं, चार किस्म के सर्प होते हैं । ब्राह्मण सर्प जो हैं वह माँस नहीं खाता । यह प्रकृति का नियम है। इसको आप हटा नहीं सकते ।

समझना यह है कि यह जो चार हैं यह चार हरेक व्यक्ति के अन्दर हैं। इसी तरह से हमारे पुरुषार्थ चार हैं। कौनसे ? अर्थ, काम, धर्म, मोक्ष; मैं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, नहीं कह रहा जान-बूझ कर। यह चारों गुरु देता है, जो असली ज्ञान देता है। चौथा पद तो आत्मतत्त्व है, तीन पदों का भी ज्ञान देना ज़रूरी है । वह गुरु ही नहीं जो आपके शरीर और आपके मन और आपकी सामाजिक और घरेलू ज़िन्दगी की समस्याओं को नहीं सुलझा सकता; वह गुरुपने का काम नहीं कर सकता। शरीर मन, बुद्धि, आत्मा — शरीर के विकास के लिए अर्थ धन, सम्पत्ति है । हमारी संस्कृति लंगोटी-धारियों की संस्कृति नहीं है। भगवान् कृष्ण कितने सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहनते थे ! आप यह बताओ कई लोग कहते हैं, कुछ ऐसे भी सन्त हैं जो यह कहते हैं, हमें पैसा नहीं चाहिए और लाखों, करोड़ों रुपया सत्संगियों से ले भी लेते हैं । अर्थ के बिना जीवन का निर्वाह नहीं कर सकते। परम दयाल जी महाराज कहा करते थे, जब बच्चा पैदा होता है तो पहले खुराक मांगता है। तुम

राम-राम मत करो पहले अपने घर के लिए धन कमाओ। यह जो चार पुरुषार्थ हैं; अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष उन में से पहला है अर्थ। और मन को सन्तुष्ट करने के लिए है काम। काम का क्या मतलब ? कामनाओं की, इच्छाओं की पूर्ति। जब तक इच्छाओं की पूर्ति नहीं होती आप कोई साधन नहीं कर सकते। और वह इच्छाओं की जो पूर्ति है उसको अगर धर्म के अनुसार किया जाये तो सुख देती हैं अगर उसके विरुद्ध किया जाये; झूठ व चारसौबीस से पैसे इकट्ठे किये जायें तो फिर वह दुःख देती हैं। तो काम की तृप्ति के लिए, मन के विकास के लिए है कामनाओं की तृप्ति करना। अब देखो! चार पुरुषार्थ हैं तो चार आश्रम भी होते हैं। चारों आश्रम ज़रूरी हैं ब्रह्मचर्य आश्रम में धन कमाने के लिए आदमी पढ़ता है, सीखता है। गृहस्थ आश्रम में अपने प्रेम से अपनी इच्छाओं की पूर्ति करता है और बुद्धि के विकास के लिए है धर्म। धर्म का मतलब दूसरे का हित :—

परहित सरिस धर्म नहीं भाई।

हम अगर धर्म का काम करते हैं तो इसलिए करते हैं कि हमारी बुद्धि का विकास हो। जो धर्म के विरुद्ध काम करता है, उसकी बुद्धि नीचे हो जाती है। आत्मा की उन्नति के लिए मोक्ष का साधन है। यह चारों जिन्दगी के जो पहलू हैं इन चारों पहलुओं को एक साथ में लेकर चलना है, असल में यह हमारा मतलब है। इसलिए गीता के अन्दर भी यही कहा गया है "चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम्"। चार वर्ण जो हैं वह गुणकर्म विभाग हैं। तो या

तो जगत् को बिलकुल मिथ्या कह देना यह भी ग़लत है और यह कह देना कि जगत् जो है वह अपने आप में सत्य है यह भी ग़लत है । यह मंजिलें होती हैं जब हम नीचे खड़े हैं तो दूसरी मंजिल पर जो आदमी खड़ा है, आप कहेंगे वह हमारे से ऊँचा है । आप जब तीसरी मंजिल पर चले जायें तब आप कहेंगे वह दूसरी मंजिल में नीचा है इसलिए सन्त-मत के अन्दर जगत् को बिलकुल मिथ्या नहीं कहा गया और न ही यह कहा गया है कि जगत् बिल-कुल सत्य है । यह तो जब हम एक दर्जे से दूसरे दर्जे पर जायेंगे तब पहले वाले दर्जे का ज्ञान हो जायेगा कि उसका वह स्थान है । आज का शब्द था :—

गुरु के मत में आके, गुरु गम पन्थ को पहचान ।
गुरु की संगत करके गुरु का मर्म ले गुरु ज्ञान ले ॥

"गुरु के मत में आकर" — अब गुरु का मत-लब यह नहीं है कि कोई खास गुरु है किसी जगह का । गुरु का मतलब मैंने आपको बताया, परमतत्त्व है और गुरु का मतलब उस परमतत्त्व का ज्ञान भी है और गुरु का मतलब उस परमतत्त्व के ज्ञान देने वाला गुरु भी है । और क्या यह गुरुमत अभी चालू हुआ है ? एक सवाल होता है । फिर लोग कहते हैं कि यह राधास्वामी मत कहता है कि जो दूसरे धर्म हैं वह गलत हैं । क्या यह गुरु की परम्परा आज चालू हुई ? नहीं ! गुरु और वर्णव्यवस्था तो आदि काल से चले आते हैं । आज भी आप को पूछेंगे जाति क्या है (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) ? हालाँकि

अब जाति का मतलब कुछ और ही हो गया ! न ब्राह्मण, ब्राह्मण का काम करता है, न क्षत्रिय, क्षत्रिय का काम करता है; जातिवाद तो ख़त्म हो गया ! लेकिन उसके साथ पूछते हैं गोत्र क्या है ? जाति तो आपके वर्ण को बताती है ; आपके विचारों के रंग को बताती है और गोत्र बताता है किस गुरु के साथ आपका सम्बन्ध है । जैसे बसिष्ठ गोत्र है ; बसिष्ठ गुरु है । हरेक आदमी का गुरु है और यह गुरुमत भी नया नहीं । वैसे तो सत्संग, सत्तगुरु, सत्तनाम यह क्या है ? उपनिषद् काल के अन्दर जब गूरु के पास जाते थे अब तो अपने आप गुरु बनने वाले गुरु हैं, वहाँ तो गुरु, कुलगुरु होते थे । और वह गुरु जो हैं राजाओं के गुरु होते थे तभी राज्य अच्छा चलता था ।

तो गुरु क्या करता था ? गुरु के पास पढ़ने के लिए जाते थे, तो गुरु उन्हें तीन तरीक़े से ज्ञान देता था। वे तीन तरीके श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन कहुलाते हैं। श्रवण का मतलब है गुरु के निकट बैठ कर उसके वचन सुनना । सन्तमत में यही श्रवण सत्संग कहलाता है। मनन का मतलब है गुरु द्वारा कहे गये वचनों पर विचार करना और अपने मन की शंकाओं को दूर करने के लिए गुरु से प्रश्न करना। इसी मनन का नाम सन्तमत में सद्गुरु का धारण करना है। मनन करते समय जब शिष्य यह सवाल करता था कि आत्मा क्या है, तो गुरु उसे विस्तार से समझाता था कि आत्मा मनुष्य में अविनाशी तत्त्व है, जो हमेशा क़ायम और दायम है। अतः शरीर आत्मा नहीं हो सकता, क्योंकि शरीर तो बदलता रहता है। यह शरीर

कभी वच्चा होता है, कभी किशोर होता है कभी नौजवान और कभी बूढ़ा हो कर मुरझा जाता है। इसी तरह मन और बुद्धि भी बदलते रहते हैं, इसलिए इन्हें भी आत्मा नहीं कहा जा सकता। आत्मा वह साक्षी है, जो अपने आप में क्रायम रहता हुआ, इन सब अनुभवों का करने वाला है। यही अविनाशी तत्त्व उस परमतत्त्व का अंश है, जिसकी एक बूँद से कोटि-२ ब्रह्माण्ड बने हैं। यह अंश, जिसे सन्तमत 'सुरत' कहता है, सब के अन्दर मौजूद होते हुए भी सबसे न्यारा है। इस प्रकार का ज्ञान देने के बाद गुरु शिष्य को कहता था कि वह साधना के द्वारा इस सच्चाई को खुद अपने अन्दर महसूस करे। ज्ञान की यह तीसरी सीढ़ी ही निदिध्यासन कहलाती है। सन्तमत में इसी का दूसरा नाम सत्तनाम अथवा गुरु से नाम दान ले कर उसका अभ्यास करना है।

मैंने आपको सीधी-सादी भाषा में यह बतलाया है कि ऋषियों ने प्राचीन काल में किस तरह से उसी परम तत्त्व का ज्ञान दिया, जो सन्तमत आज देता है। सन्तमत की यह विशेषता है कि वह जो साधन बताता है, उसके अपनाने में कोई कठिनाई नहीं है। इसी साधन को सुरतशब्द योग कहा जाता है। कलियुग में सत्संग के द्वारा ज्ञान दे कर सहज समाधि के द्वारा ही आप लोगों को अनुभव कराने के लिए सत्तगुरु प्रकट होते हैं। आज के शब्द में यही बात कही गई है कि गुरु संसार में प्रकट हुआ है, उससे तुम सच्चा ज्ञान प्राप्त करो। प्राचीन काल में गुरु अनुभवी होते थे और परमतत्त्व के ज्ञान को अपने अनुभव के आधार पर ही, अपने वचनों द्वारा शिष्यों को देते थे। सन्तमत में भी यही बात है। दाता दयाल जी ने यह जो शब्द लिखा है,

उसमें यह भी चेतावनी दी गई है कि आप यह ज्ञान ऐसे गुरु से लो, जिसको इस ज्ञान का अनुभव हो चुका हो।

जब ऐसा सच्चा गुरु मिल जाता है, तो मन में और किसी चीज़ की चाह नहीं रहती। पूरा गुरु वही होता है, जो सत्संगी को अर्थ, धर्म काम और मोक्ष, का पूरा-२ ज्ञान देता है। इसलिए दाता दयाल जी ने कहा है :—

"गुरु मिले सब कुछ मिला, अब किसको मन में चाह हो।
अर्थ, धर्म और मोक्ष की और कामना की खान ले।"

यही बात परम दयाल जी ने बार-२ कही है कि पूर्ण गुरु केवल मोक्ष का ही रास्ता नहीं बताता, बल्कि सत्संगी को अपने व्यावहारिक जीवन में सफल होने के तरीक़े भी बताता है। मुझे परम दयाल जी ने यह ख़ास कर्त्तव्य दिया है कि मैं आप सत्संगियों को लोक और परलोक दोनों के बारे में सच्चा ज्ञान देता रहूँ। सच्चे ज्ञान में भक्ति, ज्ञान और कर्म तीनों इकसार हो जाते हैं। आगे चल कर दाता दयाल जी लिखते हैं :—

ज्ञान, भक्ति दोनों गुरु के आसरे हैं यह समझ।
गुरु दया से दोनों पाले, जीते जी निर्वाण ले॥

यह बात बिलकुल ठीक है। जब आप गुरु की सच्ची भक्ति करेंगे तो गुरु प्रसन्न होकर ऐसा ज्ञान देगा, जिसके अपनाने से आप में भेद-भाव हट जायेगा और आप अपने आप को गुरु या परमतत्त्व से अलग नहीं समझोगे। इस जीवन्मुक्त अवस्था में पहुँचने से पहले ज्ञान के कारण जब झूठा अहंकार समाप्त हो जाता है, उस समय भक्त यह महसूस करता है :—

"जब मैं था तब तू नहीं, जब तू है मैं नाहिं।
प्रेम गली अति सांकरी वा में दो न समाहिं॥"

मैं यह सत्संग का काम निःस्वार्थ होकर दूसरों को रास्ता दिखाने के लिए कर रहा हूँ, अगर मेरा कोई स्वार्थ भी है तो वह केवल परमार्थ का है :—

राधास्वामी सन्त सत्तगुरु, रूप में परगट हुये।
ले शरन अब पद कमल में, झुक के मेरी मान ले॥

अब साधारण आदमी यह समझेगा कि राधास्वामी स्वामी शिवदयाल सिंह जी महाराज को कहा गया है। यह बात नहीं है। राधास्वामी परमतत्त्व है जो सन्त और सत्तगुरु के रूप में आये, आते रहेंगे और आते रहे हैं। वही परमतत्त्व या राधास्वामी तत्त्व जीवित गुरु के रूप में हर समय अवतार लेता है जैसा कि गीता में भी कहा गया है। ढूँढ़ने वाले की आँखें खुली व पहचानने वाली होनी चाहिएँ। पहचानने वाला हो तो गुरु परमतत्त्व ही होता है। मैं इन शब्दों के साथ आज का सत्संग समाप्त करता हूँ।

सबको राधास्वामी !

पत्रोत्तर

मेरे प्यारे दयाल फ़कीर पुत्र विश्वामित्र !

राधास्वामी ! परम दयाल जी सहाई !!

इसमें कोई शक नहीं कि तुम मेरा ही स्वरूप हो और इसी सम्बन्ध से वही फ़कीर तत्त्व हो जो मुझ में अपनी ताक़त से परमार्थ का काम करा रहा है। मालिक ने हम दोनों पर दया की और ऐसी समझ और ऐसा काम दे दिया जिससे हम लक्ष्य पर पहुँचने से पहले गुरु ऋण चुकाने में भी आनन्द का अनुभव करेंगे। मालिक-ए-कुल ने खुद आखिरी दम तक अपने गुरु दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए शिक्षा को बदलने और सच्चा सत्संग देने के कर्त्तव्य को पूरी तरह से निभाया। उन्हीं की मेहरबानी से आपको सहज में ही खुशी महमूस हो रही है। उन्होंने जो ज्ञान दिया है उसको ज़िन्दगी पर लागू करने से उन दर्जों से गुज़रने की आवश्यकता नहीं है जिन्हें पार करने के लिए लोग घण्टों भर सुमिरन, ध्यान किया करते हैं। जैसे कि मैंने पहले भी आपको कहा है, आपकी सन्त गति की हालत राजा जनक की ज़िन्दगी के समान है। यह बात तो सही है कि चौबीस घण्टे के लिए आप मन से आज़ाद नहीं हैं लेकिन आपकी आध्यात्मिकता की तरफ

उन्नति बराबर जारी है । जब आप कभी व्यक्तिगत रूप से मेरे सामने होंगे तो इस मामले पर सीना-ब-सीना ख्यालात और ज्ञान का आदान-प्रदान हो सकेगा । मैंने पिछले दो सालों में मालिक की दया से जो अनुभव किया है वह सब बयान नहीं किया जा सकता लेकिन इतना ज़रूर महसूस करता हूँ कि उस अनुभव को सत्संगियों में कुछ हद तक दूसरों की भलाई के लिए और अपने गुरु ऋण को चुकाने के लिए बहुत सरल भाषा में लगातार बयान करता रहता हूँ । इस समय मेरा यह अनुभव है कि सत्संगियों का और मेरा अन्दरूनी तार बंध जाता है और सत्संग खुद ही एक सहज समाधि सिद्ध हो जाता है । इसलिए मैं कह रहा हूँ कि जब आप मेरे सामने होंगे तो उस सत्संग का आनन्द और उसका परिणाम कुछ और ही होगा ।

अभी-अभी मैं हिसार शहर के दौरे से वापिस आया हूँ । यह दौरा बहुत ही सफल रहा । मैं इसके बारे में इसलिए नहीं लिख रहा कि इस सफलता को मैं सांसारिक दृष्टि से अच्छा समझता हूँ परन्तु यह सफलता इतना महत्त्व रखती है कि जिसमें मेरा गुरु ऋण चुकाने का, साथ-साथ मालिक-ए-कुल की सच्ची शिक्षा का प्रचार साधारण जनता में, पढ़े लिखे लोगों में, Intellectual में, डाक्टरों, वकीलों, अफ़सरों और कारखानादारों में सहज से घर करता जा रहा है ।

यह प्रोग्राम परम दयाल जी महाराज के बहुत प्रिय सत्संगी श्री विजय नरेश नेगी, सीनियर सुपरिण्टैण्डैण्ट पुलिस हिसार ने पहली बार रखा था । मैं २३ सितम्बर सायं हिसार पहुँचा ! उनके बंगले पर शहर के ५०-६० प्रतिष्ठित लोगों ने अपने सच्चे दिल से मेरा स्वागत किया

परन्तु मैं समझता हूँ कि यह मालिक-ए-कुल परम दयाल जी की ज़ात का स्वागत हो रहा था । मुझे इस स्वागत से वह खुशी नहीं मिलती जो मैं कई बार ऐसे अवसरों पर बतौर प्रोफ़ैसर के या रोटरी क्लब इत्यादि के अधिकारी की हैसियत से महसूस किया करता था। उस वक्त की खुशी सांसारिक थी और उसमें सात्त्विक अहंकार का माद्दा मौज़ूद था। हालाँकि उस वक्त भी मैं ऐसे मौकों पर अन्तर में शरणागत होता रहता था। परन्तु हिसार में मुझे किसी प्रकार की बाहरी खुशी महसूस नहीं हुई। मैं उस वक्त अपने आपे में ही रहता हुआ सब से बातचीत कर रहा था। उसी रात को ६ बजे से ११ बजे तक हिसार के रामलीला मैदान में ५००० की संख्या में हिसार के नागरिक पहली बार मानवता का सत्संग बड़े ग़ौर और ध्यान से सुनते रहे। मैं इस सत्संग के वातावरण को अंग्रेजी में यही कह सकता हूँ। "There was Pin drop silence and spellbounded attention."

इस तरह से २४-२५ सितम्बर को आठ और सत्संग हुए । यह अलग-२ केन्द्रों में अलग-२ क़िस्म के लोगों को दिये गये । इन सत्संगों में भी कहीं ३०००, कहीं २५०० और कहीं २००० सत्संगी लोगों की संख्या थी । एक सत्संग सिर्फ़ अंग्रेजी पढ़े लोगों को दिया गया । गर्ज़ कि हर तबके और हर फितरत (स्वभाव) के लोगों ने हिसार में मानवता और सत्यता धर्म, के सत्संगों को सुना । बहुत से लोग बाद में भी मेरे पास आये और उन्होंने कहा कि उन्होंने जीवन में ऐसा लाभदायक सत्संग नहीं सुना था ।

मैं आपको यह सब इसलिए लिख रहा हूँ कि यह

निशानिये मालिक-ए-कुल के उन शब्दों को प्रोत्साहित कर रहे हैं जो उन्होंने मुझे उर्दू के एक पत्र में लिखे थे और कहा था "अब मुझे यह पूरा निश्चय हो गया है कि तेरी ज़ात पाक के द्वारा सत्यता का धर्म दुनिया में फैलेगा, फैलेगा, फैलेगा ! मुझे बहुत खुशी है कि अगर मैं आज मर जाऊँ तो मुझे पूर्ण सन्तुष्टि होगी" इत्यादि । परन्तु वह तो मालिक-ए-कुल होने के नाते शरीर की क़ैद से निकल कर हर जगह मौजूद हैं और हमें इतनी प्रेरणा दे रहे हैं कि जिसका कोई हिसाब नहीं है ।

मेरे प्यारे विश्वामित्र ! मैंने एक जज़बे में बह कर तुम्हें यह सब कुछ लिख दिया है। जैसे कि मैंने ऊपर कहा है यह सब कुछ मालिक की मौज से हो रहा है और उसी मौज में ही परम दयाल जी महाराज ने भविष्यवाणियाँ की हैं। कुछ ही वर्षों के अन्दर जब इस कुर्रे के लोग मुसीबतों को झेल कर सबक़ हासिल करेंगे तो यह मानवता का धर्म उन्हें बचा देगा ताकि आइन्दा वह बुरे ख्यालात को छोड़ कर के अच्छे ख्यालात, "शिवसंकल्पमस्तु" के क़ानून पर चलकर दुनियावी जिन्दगी को भी बेहतर बनायेंगे और धीरे-२ रूहानियत की तरफ बढ़ेंगे ।

आपने यह बिलकुल सही लिखा था कि हमें परम दयाल जी महाराज के साहित्य को सबसे पहले दुनिया वालों तक पहुँचाना है, इसमें आपने कोई पक्षपात नहीं किया । स्वामी जी महाराज ने हज़ूर राय साहिब सालिग राम जी को जगत्कल्याण का काम सौंपा और सालग राम जी ने गुरु ऋण निभाते हुए राधास्वामी मत को फैलाया , दाता दयाल जी ने उमर भर इस सत्यता के

धम को मानवता धर्म कहकर हज़ारों किताबें लिखकर और सत्संग देकर यह साबित कर दिया कि वह सन्तमत के व्यास थे। उन्होंने अपने गुरु हज़ूर राय सालिग राम जी साहिब को परमतत्त्व का अवतार माना। इसी तरह परम दयाल जी महाराज ने मालिक-ए-कुल को मनुष्य के शरीर में दाता दयाल जी महाराज के रूप में देखा और उन्हीं की आज्ञा का पालन करते हुए ऐसी ऊँची हालत पर पहुँचे जहाँ वह खुद मालिक-ए-कुल हो गये। उन्होंने पिट्सबर्ग में आखिरी सत्संग में कहा था :—

माला फेरूँ न हर भजूँ, मुख से कहूं न राम।
मेरे राम मुझे भजें, तब पाऊं विश्राम ॥

इसमें कोई शक नहीं कि परम दयाल जी हमारे और आपके लिए ही निज धाम से अवतार लेकर आये। क्योंकि मैंने और आपने मालिक-ए-कुल को मनुष्य के रूप में परम दयाल जी की हस्ती में देखा और अनुभव किया इसलिए हमारा यह कर्त्तव्य है कि गुरु ऋण को चुकाने के लिए हम उन्हीं के द्वारा कही गई सच्चाई को मानव मात्र के कल्याण के लिए फैलायें। ऐसा करने से हम खुद उस हालत पर पहुँच जायेंगे जहाँ मैं और तू नहीं होता। मेरी हालत तो कई बार ऐसी हो जाती है कि मैं अपने आप में खो जाता हूँ। चश्म-ए- वहदत की तो बहुत ही समय तक अनुभूति होती है। ज्यों-ज्यों मैं परम दयाल जी की आज्ञा का पालन करते हुए जगह-२ सत्संग देता हूँ त्यों-२ अन्दरूनी गहराइयों में उतरता जा रहा हूँ। शायद मेरे यह शब्द आपको और भी प्रेरणा दगे जैसे कि मैंने पहले लिखा था, हमारा और आपका आमने-सामने बैठकर सत्संग होना बहुत लाभदायक रहेगा।

मेरा दिली आशीर्वाद है कि आप फूलो, फलो, रूहानियत में तरक्क़ी करो और दुःखी जीवों की सेवा भी करते रहो । आपको तथा आपके घर वालों को दिली आशीर्बाद और राधास्वामी ।

आपका फ़कीरमय

मानव

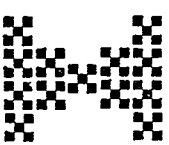

मासिक सन्देश

मेरे प्यारे सत्संगियो :

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई !

यह महीना मेरे तथा मेरे साथ जाने वालों के लिए भारी रहा, क्योंकि हमने इस दौरान में उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा और राजस्थान का लम्बा चौड़ा दौरा किया। हम ६ अक्तूबर को होशियारपुर से रवाना हुए और १४ अक्तूबर तक बनवारीपुर, मोदीनगर और मेरठ का दौरा किया। इन तीनों स्थानों पर सत्संगियों तथा कार्यकर्त्ताओं ने बड़ी मेहनत और प्रेम से काम किया और सत्य और रूहानियत के सत्संगों से लाभ उठाने के लिए अधिक से अधिक लोगों को बुलाया। सत्य और मानवता सभी धर्मों का सार है। इसी ही का नाम सत् सनातन धर्म है, जिसे समय-२ पर आर्ष धर्म, सन्त-मत और राधास्वामी मत कहा गया है। मैं जितना अधिक इन रूहानी सत्संगों में अपने आप को लगा रहा हूँ, उतनी ही अधिक मेरी अन्दरूनी शान्ति और रूहानी सन्तुष्टि सहज होती जा रही है। इसका सीधा प्रभाव पुराने सत्संगियों पर और सत्संग में आने वाले उन लोगों पर पड़ रहा है, जिनकी संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

यह सब कुछ वैसे ही घटित हो रहा है, जैसे कि परम दयाल जी महाराज ने मुझे यह काम सौंपने के समय भविष्य-वाणी की थी। आज मानवता की मांग हर जगह है। विश्व भर में दुःखी और त्रस्त मानव के उभार के लिए यह मानवता बहुत ज़रूरी है। यदि मानव इस पृथ्वी पर

मानवता के असूलों पर नहीं चलेगा, यदि इस व्यावहारिक सच्चाई की तरफ लापरवाही की गई और यदि मानवता के असूलों को ठुकराया गया तो इस पृथ्वी से न ही केवल सुख बल्कि मानवमात्र की हस्ती मिट जायेगी।

सौभाग्यवश सच्चाई, प्रेम और पराभक्ति के सन्देश का विश्व में सब जगह स्वागत हो रहा है और हर धर्म, सम्प्रदाय, जाति और राष्ट्र के लोग इसे अपनाने के इच्छुक हो रहे हैं। इसी दृष्टि से यह दौरा उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान के लिए महत्त्वपूर्ण रहा। उपरोक्त जगहों पर सत्संगों के बाद १४ अक्तूबर को फ़रीदाबाद, १५ और १६ अक्तूबर को देहली, १६ से १९ अक्तूबर तक मुरादाबाद और बिलारी में और २० से २३ अक्तूबर तक हापुड़, सरसोंहेड़ी तथा सहारनपुर में सत्संग देने के बाद हम अलवर पहुँचे। अलवर का मेरा यह पहला दौरा २३ से २५ अक़्तूबर तक बहुत ही सफल रहा। अलवर के सत्संगियों की प्रसन्नता और उनकी तसल्ली स्पष्ट दिखाई दे रही थी। उन्होंने हम सब को बड़े प्रेम और सत्कार से रखा। श्री मूलचन्द जी गाँधी एडवोकेट और खुराना परिवार बहुत ही प्रसन्न थे। उन्होंने सत्संग के आयोजन में बहुत परिश्रम किया और अन्त में कहा, "अब हमें पूर्ण विश्वास हो गया है कि परम दयाल जी महाराज शारीरिक रूप से भी हम से जुदा नहीं हुए हैं"। अलवर का केन्द्र राजस्थान में सबसे पराना है और उसके बाद भीलवाड़ा की बारी आती है।

अलवर के सम्बन्ध में परम दयाल जी महाराज के भक्त, शिष्य श्री मूलचन्द गाँधी की माता की सत्य कहानी यहाँ पर लिखना बहुत ही उचित है। यह घटना परम दयाल

जी महाराज के आखिरी दौरे के समय घटित हुई। अलवर पहुँचने पर पहले ही दिन करीब-२ सभी सत्संगी परम दयाल जी महाराज से आशीर्वाद लेने आये। उनमें से बहुत से लोगों ने अपनी दुनियावी इच्छाओं की पूर्त्ति के लिए महाराज जी से आशीर्वाद मांगा। श्री मूलचन्द गाँधी जी की माता जी, जिन्हें केबल मालिक के मिलने की चाह थी, महाराज जी के निकट आयीं और अपने मस्तक को महाराज जी के चरणों में रखकर कहा—महाराज जी! मेरी एक करबद्ध प्रार्थना है कि आप मुझे इस असार संसार से मुक्ति बख्शें। परम दयाल जी महाराज ने उससे कहा—माता! करोड़ों में से तुम ही एक ऐसी महिला हो जिसने मुझसे मुक्ति मांगी है। तुम्हें मोक्ष मिल जायेगा। मैं तुम्हें इसके लिए सच्चे दिल से आशीर्वाद देता हूँ। जब महाराज जी उसे यह आशीर्वाद दे रहे थे तो वह बिलकुल स्वस्थ थीं और उन्हें कोई शारीरिक रोग नहीं था।

दूसरे दिन परम दयाल जी महाराज सत्संग दे रहे थे और मूलचन्द जी की माता जी ने परम दयाल जी के लिए और सत्संगियों के लिए भोजन तैयार किया। इस काम को समाप्त करते ही वह घर में बैठीं और शान्तिपूर्वक उनकी आत्मा शरीर से विदा हो गई। जब इस पवित्र आत्मा के परलोक सिधारने की खबर परम दयाल जी महाराज को दी गई तो वह उस समय सत्संग दे रहे थे। परम दयाल जी महाराज को इस बात का आश्चर्य हुआ कि उस महिला की मुक्त होने की प्रबल इच्छा तुरन्त ही कैसे पूरी हो गई। उन्होंने सत्संग को जारी रखते हुए सभी सत्संगियों को कहा कि वह बिना रोने-धोने के मूलचन्द जी की माता के अन्तिम संस्कार में सम्मिलित हों और उस पवित्र आत्मा द्वारा

बनाये गये भोजन को प्रसाद रूप में लें। महाराज जी की इस आज्ञा का पूरी तरह से पालन किया गया। मुझे इस घटना को सुनकर बहुत ही हर्ष हुआ और मैंने सुनकर यह महसूस किया कि अलवर के सभी सत्संगियों और खासकर गाँधी और खुराना परिवारों की श्रद्धा, प्रेम और भक्ति सराहने के योग्प है।

यदि मैं इस मासिक सन्देश में राजस्थान के दौरे की सभी घटनाए लिखने की कोशिश करुँ तो वह एक किताब बन जायेगी। उनमें से दो घटनाएँ संक्षेप में लिखने के योग्य हैं। एक घटना यह है कि सारे भारत के दार्शनिकों की एक संस्था 'अखिल भारतीय दर्शन परिषद्' है जिसका वार्षिक अधिवेशन २७, २८, २९ अक्तूबर को उदयपुर में हुआ। उस परिषद् में भविष्य में हमेशा के लिए परम सन्त पंडित फ़क़ीर चन्द जी महाराज स्मारक मान्यता व्याख्यान की स्थापना की गई है। इसी प्रकार जयपुर में मानवता मन्दिर और मानवता शिक्षा केन्द्र स्थापित करने की दृष्टि से आध्यात्मिकता, मानवतावाद और सत्यता की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के नाम से एक परिषद् स्थापित की गई है और सरकारी तौर से उसे रजिस्टर्ड करवा दिया गया है।

जयपुर में २५ अक्तूबर को श्री परमानन्द हाल में जो सत्संग आयोजित किया गया उसका श्रेय मेरे पुराने शिष्य श्री राधेश्याम धूत, श्री एम० एल० गोयल आई० ए० एस० को और श्री एम० के० शर्मा तथा श्री परमानन्द आई० ए० एस० को है। इस सत्संग में सम्मिलित होने वाले जयपुर के सत्संगियों और प्रतिष्ठित व्यक्तियों के अतिरिक्त अजमेर से आये हुए सत्संगी भी थे। उस

रात को सत्संग के समाप्त होने के बाद अजमेर के श्री सुमेरसिह राठौर (जो सऊदी अरब रेलवे में काम करते हैं) तथा श्री अर्जुन लाल छापरवाल, जयपुर के सुपरिण्टेंण्डैण्ट इन्जीनियर और उनकी योग्य पत्नी श्रीमती राधा मेरे पास आयीं। उन्होंने आग्रह किया कि २६ अक्तूबर को ब्यावर जाते हुए हम लोग अजमेर में थोड़े समय के लिए रुकें। हालाँकि राठौर और छापरवाल परिवार से मेरी पहली ही भेंट थी। मेरी अन्तर आत्मा ने उनके निमन्त्रण को स्वीकार किया। बाद में मुझे पता चला कि परम दयाल जी महाराज इन दोनों परिवारों से प्रेम रखते थे। इसके फलस्वरूप भीलवाड़ा से वापिसी पर जयपुर आते हुए १ नवम्बर १९८३ को अजमेर में श्री राठौर के घर सत्संग रखा गया। अजमेर के सभी सत्संगी वहाँ आये और उन्होंने निश्चय किया कि वह सब हर महीने बारी-बारी से सभी सत्संगियों के घर में मासिक सत्संग रखा करेगें। ब्यावर में मेरे योग्य शिष्य श्री मोती चन्द गोलछा नगर सेठ ने 26 अक्तूबर को सत्संग आयोजित किया। भीलवाड़ा में श्री तजेन्द्रमणि गुप्ता इन्जीनियर, श्री कृषक जी महाराज के पौत्र और श्री हरि गर्ग ने 29,30 और 31 अक्तूबर को भीलवाड़ा में सत्संग आयोजित किया।

दौरे की इस ब्याख्या को यहीं समाप्त करके मुझे अपने वचन के मुताविक आप सब के लिए सन्तमत की दृष्टि से यज्ञ की विशेषता बतानी है। सन्तमत के मुताबिक हम सब परमधाम से आये हुए हैं और परमतत्त्व के अंश हैं। इसी लिए हम मनुष्य के रूप में पूर्ण हैं। हमारी यह पूर्णता अनेक जन्मों के कर्मों के कारण हमारे में छिपी हुई इसलिए है क्योंकि हमारे असली आपे पर कर्मों के पर्दे पड़ गये हैं। इन्हीं पर्दों

की रुकावट से हमारी पूर्णता प्रकट नहीं होती। इन रुकावटों को दूर करने के लिए हमें अपने कर्मों को शुद्ध करना चाहिए और हमें अपने आपे को पहचानना चाहिए। परम दयाल जी महाराज ने इसी बात को सरल भाषा में बताते हुए कहा है :-

पहचान ले अपने को, तो इन्सान खुदा है।
ज़ाहिर में गो है खाक, मगर खाक नहीं है ॥
जलबों की खता क्या, जो दिखाई नहीं देते।
खुद देखने वालों की नज़र, पाक नहीं है ॥

यहाँ पर भी नज़र को पाक करने की बात की गई है। नज़र तभी पाक हो सकती है जब हम मन, वचन और कर्म से किसी भी जीव को अपनी ओर से दुःख न पहुँचायें बल्कि दूसरों की भलाई के लिए अपने हित की कुर्बानी दें। कुर्बानी का दूसरा नाम यज्ञ है। मैंने यह बात पहले भी बताई है कि सारे जगत् का विस्तार या फैलाव यज्ञ है। परमतत्त्व, जिसे सन्तमत समुद्र कहता है अनादि और अनन्त है। उसने अपने आप को अपनी बूँद के द्वारा त्रिगुणात्मक जगत् में बदल दिया है। यह तीन गुणों वाला जगत् सीमित है जबकि इसका आधार परमतत्त्व सभी सीमाओं से परे है। इस जगत् में काल है, सुख और दुःख है, जन्म और मरण है इसलिए इसे काल-देश कहा जाता है। इस काल-देश के अन्दर हमारी सुरत जो अपने आप में अविनाशी है, मालिक से अलग होकर आई इसमें आकर ही उसे यह अनुभव होता है कि वह अपने प्रियतम से बिछुड़ गई है। इस बिछोड़े से दुःखित होकर वह बहुत तेजी से निजघर वापिस जाना चाहती है। उसे इस बिछोड़े के कारण ही निजघर के प्रति जबरनस्त चाह पैदा होती है। अगर वह कुर्बानी करके दयाल-देश से काल-देश में न आती तो उसे अपने प्रियतम

परमतत्व की कदर न होती। परमतत्व ने स्वयं एक से अनेक होकर यज्ञ किया और उसके अनेक अंशों को पराभक्ति का अनुभव हुआ। दूसरे शब्दों में यज्ञ के विना या अलग होने के विना सुरत को अपने मालिक से मिलने का आनन्द प्राप्त न हो मकता। इस सारे जगत् का लक्ष्य यही है कि परमतत्व के अंश अलग हो-हो कर वापिस अपने स्थान पर जायें। इसी यज्ञ के चक्र को या जगत् के विकास को परमतत्व की लीला कहा गया है।

सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा ने देवताओं अर्थात् दैवी शक्तियों और सारी प्रजा को पैदा करके कहा कि मनुष्य यज्ञ यानि कुर्बानी के द्वारा देवताओं को प्रसन्न करें और देवता मनुष्यों को सुख पहुँचायें। इतना ही नहीं बल्कि यह भी कहा गया है कि इस परस्पर यज्ञ से देवता और मनुष्य फलें, फूलें। यज्ञ की यह व्याख्या बतलाती है कि इस जीवन में सुखी होने के लिए कुर्बानी करने की ज़रूरत है। इसलिए अपने कर्म को शुद्ध करने के लिए और निजघर को वापिस लौटने के लिए अनेक प्रकार के यज्ञों का कथन किया गया है। उनमें से कर्म यज्ञ, ज्ञान यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ आदि की व्याख्या की गई है। यज्ञों की इस व्याख्या को अगले महीने के मासिक सन्देश में दिया जायेगा और यह बताया जायेगा कि यज्ञ का अक्षर-ब्रह्म और परमतत्त्व से क्या सम्बन्ध है।

इन शब्दों के साथ मैं आप सब को इस महीने की सद्भावना देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप परहित धर्म पर चलते हुए अपने जीवन को सफल बनायेंगे।

सब को राधास्वामी !

आप का फ़कीरमय,

मानव

वन्दनम्

चरण शरण की वन्दना, नित कोइ और न काम
गुरु बसो चित आय मेरे, बख्श दो निज नाम ॥
तेरी शरणागत हुआ फिर, किसकी राखूं आस ।
आस तो तेरी दया की, जग से रहूँ उदास ॥
रूप ध्याऊँ, नाम गाऊँ, शब्द राता मन ।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग मेरा धन ॥
सीस पर निज कर कमल धर, लिया चरण लगाय ।
पतित प्राणी तर गया, गुरु शरण तेरी आय ॥
मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग ।
राधास्वामी की दया से, भाग पूरन जाग ॥

विशेष सूचना

परम सन्त हज़ूर मानव दयाल जी महाराज जनवरी 1984 तक मानवता मन्दिर में निवास करेगे।
मानवता मन्दिर में अगलामासिक सत्संग 18-12-83 को होगा।

★★★

Regd. No. 26265/74 DECEMBER 10th 1983
MANAV MANDIR NWHSP—7

ADDRESS

To ______________________________

____

128[redacted] Sh. A. Hanmanth Rao
H. No. [redacted]
Hyderabad 500028 A.P. [redacted]

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.

Phone : 2022

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)